॥ ॐ ॥

श्रावक-वनिता-बोधिनी

अर्थात्

गृहस्थ-जैन-स्त्रियोंके कर्तव्य-कर्मका संक्षिप्त विवरण



लेखक—
जयदयालमल्ल जैन



प्रकाशक—
भा. दि. जै. महिला-परिषद् ऑफिस
जुबिलीबाग, तारदेव—बम्बई



वीराब्द २४४६ । विक्रमाब्द १९७७ ।

चतुर्थावृत्ति } १ अगस्त १९२० ईसवी { मूल्य लागत मात्र ॥=) नव आने

मुद्रक—रा चिंतामण सखाराम देवळे, मुंबई वैभव प्रेस,
सँढर्स्ट रोड, गिरगाव-मुंबई

प्रकाशक-मगनबहेन, मन्त्रिणी भा० दि० जै० महिला परिषद
जुबिलीबाग, तारदेव-बम्बई।

चेतावनी

(श्रीमती प० चदाबाईजी आरा)

जागोरी जैन बहिनो, कुछ तो भला कमाओ।
मानुष जनमको पाके, मत व्यर्थ ही गमाओ ॥ १ ॥
चौरासी पार करके, आई कहीं ये बारी।
भाग्योसे मिल गया है, सार्थक इसे बनाओ ॥ २ ॥
कुछ पापके उदयसे, नारीका जन्म पाया।
उसको समाज-हितकर, सब भातिसे बनाओ ॥ ३ ॥
प्राचीन जैनियोका, साहस घटाया तुमने।
इस उच्च जातिको तुम, नीचा न कर दिखाओ ॥ ४ ॥
किस नींद सो रही हो, निज धनको खो रही हो।
ससारकी सरॉमें, मत ज्ञान-धन लुटाओ ॥ ५ ॥
माता पिता कुटुम्बी, सम्बन्धी लोग जितने।
भरतारसे भी विनती कर जोडके सुनाओ ॥ ६ ॥
विद्या दो हमको माता, शिक्षा दो हमको भाई।
बिन ज्ञान हमको मूर्खा, मत जानकर बनाओ ॥ ७ ॥
निज स्वार्थमें कमीका, कुछ डर न दिलमे करना।
कन्या भी होवे विदुषी, यह ख्याल दिलमे लाओ ॥ ८ ॥
धर्मज्ञ विदुषी होकर, हम भी करेंगीं सेवा।
ससार-यात्री पदको, जलदी सफल बनाओ ॥ ९ ॥
इस भांति विनती करके, चेतोरी जैन बहिनो।
होवे सफल मनोरथ, जिन-वाणी शरण आओ ॥ १० ॥

र० रु० श्राविकाश्रम बम्बई

उपर्युक्त नामकी सस्था आज लगभग ११ वर्षसे जैन-स्त्री समाजकी, और विशेषत विधवा—ससारकी जैसी कुछ सेवा कर रही है वह सब पर प्रकट है। वर्तमानमें ९० छात्राएँ हैं। हिन्दी, सस्कृत, गुजराती, मराठी और अग्रेजी भाषाके स्कूली विषयोंके सिवाय सीना—पिरौना और धर्मविषय सिखाकर, स्त्रियोंके जीवनको पवित्र और उपयोगमय बना देना ही इसका मुख्योद्देश है। समर्थ बाइयोंसे १०) मासिक भोजनखर्च और असमर्थोंको वैसे ही (विना खर्च लिए) भरती किया जाता है। समाजसे प्रार्थना है कि, वह इसको चलानेमें हर प्रकारसे मदद दे। इसका स्थायी फड १ लाख कर देनेकी बड़ी आवश्यकता है। अभी तक ९७०००) हो गया है। मासिक खर्च ७०० रु है। विशेष नियम आदि नियमावली मगाकर देखने चाहिए।

व्यवस्थापिका—

र० रु श्राविकाश्रम, जुबिलीबाग

तारदेव बम्बई।

विज्ञापन ।

हमारे यहा नीचे लिखी स्त्री—उपयोगी पुस्तकें भी मिलती हैं ।

३।।) अर्थप्रकाशिका ।

।=) श्राविका सुबोध (गुजराती) ।

।।) सौभाग्य रत्नमाला ।

।।) उपदेश रत्नमाला ।

।।) ऐतिहासिक जैन स्त्रिया ।

(यह पुस्तक हिन्दीके अतिरिक्त मराठी भाषामें भी है।)

।-) चम्पा ।

=) श्राविका सुबोध स्तवनावली ।

इनके अतिरिक्त प्रत्येक प्रकारकी धार्मिक और स्त्री-उपयोगी, तथा सर्व साधारणोपयोगी पुस्तकें भी हमारे यहां मिल सकती हैं ।

पता—

मैनेजर, महिला-ग्रंथ-रत्न-भंडार,

जुबिलीबाग—तारदेव

बम्बई ।

नये संस्करणकी भूमिका

पाठक और पाठिकाओ,

आजसे ६ वर्ष पहिले प्रस्तुत पुस्तकका तृतीय सस्करण मेरे स्वर्गीय पिता श्रीमान् सेठ माणिकचन्द हीराचन्दजीने प्रकाशित करवाया था । बहुत समय हो चुका जब ही उस सस्करणकी सारी पुस्तकें बिक चुकी थीं ।

विज्ञ पाठक पाठिकाओंकी प्रेरणासे और भारतवर्षीय–दिगम्बर–जैन–महिला–परिषदकी ओरसे मैं इसकी चतुर्थावृत्ति प्रकाशित करवाती हू। जिसके सम्बन्धमे मुझे दो प्रार्थनाएं करनी हैं; पहिली तो यह कि, हजार चेष्टा करने और बिलकुल लागत मात्र दाम रखनेपर भी मूल्य कहीं पहिलेसे दुगुना हो गया है, इसके लिये समयकी महार्घता ही उत्तरदायी है, मैं नहीं । दूसरी, इतनी उतावली करनेपर भी भाषा यथासाध्य शुद्ध करवा दी गई है । जिसे पाठक पाठिकागण पढकर ही जान सकेंगे । अनावश्यक समझकर इसकी पहिली भूमिका निकाल दी है ।

कहीं कहीं आवश्यक जानकर टीका–टिप्पणी भी कर दी गई है, पर बहुत कम । आशा है, कि ये थोडेसे परिवर्तन जो पाठक पाठिकाओंकी इच्छानुकूल ही किये गए हैं; पसन्द पडेंगे ।

पुस्तकके अनेक विचारांशोंसे मैं सहमत नहीं, कई अनेक सज्जनोंने भी उन विचारांशोंको निकाल देकर पुस्तक प्रकाशित

करवानेकी सम्मति दी थी, परन्तु ऐसा करना लेखकके विचारोंकी हत्या करना समझकर ऐसा नहीं किया गया । जब तक किसी अन्य सुयोग्य लेखककी कोई उत्तम पुस्तक हमें प्रकाशित करनेको प्राप्त नहीं होती, तब तक आप लोग इसीसे सन्तोष करें ।

संभव है कि भाषा शुद्ध होते समय भावोंमें भी शायद कहीं अन्तर आ गया हो, पर जान बूझकर ऐसा कोई अन्तर डाला नहीं गया है ।

भूमिका पूर्ण करनेके पहिले **जैन-धर्मभूषण श्रीमान ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी**को उनकी अमूल्य सम्मतियोंके लिए और **खुरई-सिमलासा, जिला सागर निवासी श्रीयुत भगवन्त गणपति गोइलीयजी**को उनकी भाषाशुद्धि, प्रेसकापी और प्रूफ संशोधनादिके लिए धन्यवाद देती हुई आभार मानती हूं ।

अन्तमें मैं इतनी प्रार्थना और करती हूं कि भरसक चेष्टा करने पर भी यदि कोई भूलें रह गई हों तो, पाठक-पाठिकागण उन्हें क्षमा करें । तथा मुझे उनसे सूचित करें । ताकि अगले संस्करणमें वे शुद्ध कर दी जाएँ ।

र रु. श्राविकाश्रम, जुबिलीबाग, तारदेव बम्बई, द्वि० श्रावण कृष्णा द्वीतिया वीराब्द २४४६	समाजसेविका, मगनबेन माणिकचंद ।

अनुक्रमणिका

प्रथम प्रकरण—स्त्रीपर्याय	१
द्वितीय प्रकरण—स्त्रीशिक्षा	१९
तृतीय प्रकरण—स्त्रियोंकी नित्यचर्या	४७
चतुर्थ प्रकरण—ऋतुक्रियाविचार.	७०
पंचम प्रकरण—मिथ्यात्वनिषेध	८४
षष्ठ प्रकरण—विधवाओंका कर्तव्यकर्म	१०४
सप्तम प्रकरण—सूतकनिर्णय	११७

नोट—इसके अतिरिक्त प्रत्येक प्रकरणके अंतर्गत बहुतसी ऐसी ऐसी बातें भी लिखी गई हैं, जो स्त्रियोंके लिये अत्यन्त उपयोगी और ग्रहण करनेयोग्य हैं।

श्री वीतरागाय नमः ।

श्रावक वनिता बोधिनी ।

प्रथम प्रकरण



स्त्री पर्याय



दोष रहित गुण गण सहित, चौबीसो जिनराज,
मन वच तनकर नमत हों, सिद्ध होनके काज ।
प्रणमू श्रीगुरुके चरण, जे निग्रथ सज्ञान,
पुनि वन्दौ जिन धर्मको, मिथ्या-तम-हर-भान ।
काल दोषके हेतुसे, मति गति भइ अति हीन,
श्रद्धा ज्ञानाचरण तप, दिन दिन होत मलीन ।
उत्तम ज्ञातिन मध्य लखि, क्रिया अधिक निकृष्ट,
श्रावक वनिता बोधिनी, लिख् सवन हित इष्ट ।

इस संसारके सारे जीव सुखका लाभ और दुःखका नाश चाहते हैं । ऐसा कोई भी जीव नहीं जो दुःखसे

डरकर सुखकी इच्छा न करता हो; परन्तु वे प्रायः सारे ही जीव सुख प्राप्त करने और दुख दूर करनेका ठीक ठीक कारण न जानने तथा विरुद्धाचरणसे नाना भाँतिके शारीरिक और मानसिक दुःखोंसे दुखी हो रहे हैं। फिर शास्त्रोंमें कहे हुए नर्क आदिके घोर दुःखोंकी तो याद करनेसे ही कलेजा काँप उठता है।

सचमुच यदि विचार करके देखा जाय तो धर्म धर्म चिल्लानेवाले सब जीव धर्मके स्वरूपको ही नहीं जानते, जिससे अंधोंकी नाँई भटकते और अनेकों दुःखोंसे टकराते हैं, इसी कारण श्रीगुरुने अपनी बुद्धिसे धर्मका उपदेश देकर सच्चे सुखकी प्राप्तिका उपाय बताया है। उसीके अनुसार यहाँ पर कुछ लिखा जाता है, आशा है हमारे भाई और बहिने इस पर ध्यान देंगीं।

आत्माके स्वभावको धर्म कहते हैं। इस धर्मको जानकर इसमें आचरण करनेसे ही दुःखका नाश होकर सच्चा स्वाधीन सुख मिलता है, इसे सब बुद्धिमान निर्विवाद स्वीकार करते हैं। सारांश यह कि विना धर्मके सुखकी प्राप्ति होना असंभव है।

आत्माका स्वभाव-धर्म (रागद्वेष रहित देखना, जानना) अनादि कालसे हिंसा, असत्य, चोरी, कुशील और तृष्णा आदि पाप-कर्मरूप प्रवृत्तिके कारण मलिन–राग द्वेष-रूप–

हो रहा है, इसलिए उसे शुद्ध करनेका-पाप छोड अहिंसा, सत्य, अचौर्य्य, ब्रह्मचर्य्य और सन्तोषरूप प्रवर्तनेका उपदेश हमारे आचार्योंने जहां तहां दिया है, तथा आत्माके धर्मको घातनेवाले पांच पापोंके त्यागको धर्म कहा है। क्योंकि अहिंसादि धर्मोंके धारण करनेसे ही हम संसारके दुःखोंसे छूट, निजानन्द और परमात्म दशाको प्राप्त हो सच्चे सुखी हो सकते हैं। रत्नकरण्डश्रावकाचारमें कहा है कि:–धर्म वही है जो नर्क, पशु आदि कुगतियोंके असह्य और निकृष्ट दुःखोंसे निकाल स्वर्ग मोक्षके उत्कृष्ट सुखोंको प्राप्त करावे। इसके सिवा आत्माके स्वभावको छोड वास्तविक और सच्चा धर्म और कुछ है ही नहीं। इसी आत्माके स्वभावकी प्राप्ति कर लेना यथार्थ धर्म-पालन है। जिन उपायोंके करनेसे यह जीवात्मा अनादिके कर्म-रोगसे निर्मुक्त होकर राग-द्वेष-रूप अशुद्धताको छोड शुद्ध परमात्मा हो, उन्हीं उपायों–कारणों–का नाम व्यवहार धर्म है। इसीके अनुसार आचरण करना ही हमारा परम पुरुपार्थ है। इसी लिए यहा पर व्यवहार धर्मका वर्णन किया जाता है, क्योंकि यही व्यवहार धर्म निश्चय धर्मकी उत्पत्तिका कारण है।

इन्द्रियोंकी लम्पटता द्वारा उत्पन्न हुए पंच पापोंकी प्रवृत्ति तथा क्रोधादि चारों कषायोंकी उत्पत्तिको रोकनेवाला यह व्यवहार धर्म ही है जो मुनिव्रत तथा श्रावक व्रतके भेदसे

पालन किया जाता है। मुनि धर्म चारित्र रूपमें १३ प्रकारका है—पच महाव्रत, पंच समिति, और तीन गुप्ति। पुनः श्रावकव्रत द्वादश भेद रूप है—पच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षा व्रत। ग्यारह प्रतिमारूप भी श्रावक धर्म है। इस स्थान पर श्रावक तथा मुनिव्रतका व्याख्यान करनेसे पुस्तक बहुत बढ़नेके सिवाय इष्ट प्रयोजनकी हानि होना संभव है। इसलिये इस विषयको यहीं समाप्त कर आगे चलते है। जिनको इसका पूरा व्यौरा मालूम करना हो वे मूलाचार, पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, स्वामिकार्तिकेयानुप्रेक्षा तथा अन्य आचारशास्त्रोंसे ज्ञात करें।

निश्चय रहे कि जो पुरुष श्रावक-व्रतकी ११ प्रतिमाओंका भली भांति पालन नहीं कर सकता वह मुनिव्रत धारण करने योग्य कदापि नहीं है। इसी प्रकार श्रावक व्रत पालनेकी योग्यता तभी हो सकती है जब पहिले मिथ्यात्व, अन्याय, और अभक्ष्यका[*] त्याग किया जाय। जो स्त्री व पुरुष इन महान पापोंको सेवन करता हुआ भी अपनेको व्रती श्रावक कहता है वह मानो अक्षर-शत्रु पुरुषको पंडित बताता है। अतएव जो स्त्री व पुरुष सच्चे सुखको चाहते हैं, उनको ये तीनों दोष सर्वथा त्यागने योग्य है।

---

१ कुदेवादिका पूजना। २ सप्त व्यसन सेवन करना। ३ अष्टमूलगुण नहीं पालना। ४ मद्यादिकका भक्षण करना।

वर्तमान कालमें गृहस्थाश्रमकी अवस्थाको देख खेदपूर्वक कहना पड़ता है कि इस विकराल पंचम कालके पापमय समयमे, यह तीनों दोष, जैन जातिमें दिन पर दिन बढते ही चले जा रहे है। और ग्रहस्थोंका क्रियाकाण्ड इतना विगडता चला जा रहा है कि जिसका वर्णन करते " आपन जांघ उघारिये आपहि मरिये लाज " की कहावत चरितार्थ होती है। यही कारण है कि आज कल मुनियोंका सद्भाव तो दूर रहा प्रतिमाधारी त्यागी संयमी पुरुषोका मिलना भी दुस्तर प्रतीत होता है । शास्त्रोंके पढनेसे ज्ञात होता है कि प्राचीन समयमें मुनिगण स्थान स्थान पर घूम उपदेश देते थे, जिससे धर्मकी प्रभावना और उन्नति होती थी। उस समयके क्रियाकाड ज्ञाता गृहस्थोके यहां उन्हें शुद्ध आहार मिलता था। गृहस्थ लोग जानते थे कि साधु संयमीको आहार कराए विना स्वतः आहार करना गृहस्थ धर्मके विरुद्ध है। इसी लिए वे भोजन करनेके पहिले द्वारापेक्षण (प्राशुक जलसे भरा हुआ पात्र हाथमें ले द्वारपर खडे हो सुपात्र अतिथिकी राह देखना) करते और जव किसी सुपात्र सज्जन या साधुको आहार दान दे लेते तो अपना अहोभाग्य समझते थे । यदि किसी सुयोग्य श्रावक या साधुको भोजन देनेका संयोग न आता तो अपने भाग्यको

बहुत ही कोसते और साधुओंके भोजनका समय निकल जाने पर आप भोजन करते थे । उन्हें यह भले प्रकार विदित था कि गृहस्थका घर पट्कर्मोंकी आरंभी हिंसाके कारण स्मशानतुल्य है, और बिना अतिथि संविभागके कदापि सफल और शुद्ध नहीं हो सकता है।

वर्तमानमें जैनियोंकी खानपानक्रिया इतनी बिगड गई है कि यदि कर्मयोगसे थोडा भी संयमधारी क्रिया-कांडी भोजन करनेवाला किसीके घर आ जावे तो उसके भोजन योग्य सामग्रीका मिलना कठिन हो जाता है । यदि सामग्री भी मिल जाय तो क्रियापूर्वक रसोई बनानेवालोंकी न्यूनता कैसे पूरी हो! इस अवस्थामें यदि दो चार कर्म-कांडी साधर्मी सज्जन किसी स्थान पर पहुंच जायें तो उन्हें शुद्ध भोजन कैसे मिले? यही बडी कठिनाई है। ऐसे ही अनेक दोषोंसे इस निकृष्ट कालमें साधुव्रत धारण करना कठिन हो गया है। कोई क्षुल्लक ऐलकके व्रत धारण करनेका साहस नहीं करता (खेद)। त्यागी महान पुरुषोंके अभाव होनेसे जैन जातिसे उपदेश उठ गया, जिससे मिथ्यात्व, अन्याय और अभक्ष्यका जोर बढ गया। जो पुरुष संसार और शरीरके भोगोंसे ममत्व घटाना चाहते हैं वे शुद्ध खान पानकी योजना न देख घरहीमें रहके श्रावक व्रत पालकर संतोष करते हैं। क्योंकि धर्मात्मा-

ओंको राग द्वेष मेटनेवाली, सुबुद्धिको उत्पन्न करनेवाली शुद्ध क्रिया और आहार विधिकी भी आवश्यकता है। मलिन बुद्धि होने और धर्ममें अरुचि होनेका एक कारण शुद्धाचरणकी हीनता है । निर्धनता व मूर्खता होनेका एक कारण विकृत भोजन है । दुःख रोग आदिकी वृद्धि भी खानपानकी भ्रष्टतासे होती है ऐसा जान जैनी मात्रको क्रियाकांड और खानपान पर लक्ष्य देना चाहिये और हीनताएं दूर करना चाहिए। परन्तु समयका प्रवाह और उसकी आवश्यकताएं भी हमे भूलना न चाहिए ।

रसोई आदिकी क्रिया स्त्रियोंके आधीन है यदि स्त्रियां शिक्षिता हों तो रसोई अवश्य ही शुद्ध तैयार हो। तब उन्हें कोई अशुद्धाचरणका उलहना कैसे दे? अशिक्षिता स्त्रियां अकेला खान पान ही क्या, गृहस्थीका प्रत्येक कार्य्य अविचारपूर्वक करती हैं। एक तो वे मूर्ख और उतावली हुआ ही करती है फिर यदि अशिक्षिता भी हों तो कहना ही क्या? वे गृहस्थीका प्रत्येक कार्य्य चक्की, चूल्हा, झाड़ना, बुहारना, पानी छानना और ओखली—आदिको—ठीक ठीक विधिपूर्वक नहीं करतीं, शुद्धता और दयाका भी विशेष विचार नहीं रखतीं । इसमे उन अकेलीका दोष नहीं है, पुरुषोकी मूर्खता तो उनसे भी बढकर है । पुरुषोंने स्त्रियोंको संतानोत्पत्ति करनेवाली मशीन समझ रक्खा है।

उन्हें सोचना चाहिये कि स्त्रियां उनके गृह-संसार रचनेमें विश्वकर्म्मा है, वे तो केवल बाहरसे द्रव्य कमा ला देनेवाले हैं। स्त्रियां जैसा शुद्ध अशुद्ध रांधना रांध देती हैं पुरुष उसे ही वडी मौजसे खा पी कर संतुष्ट होते है फिर स्त्रियोंको क्या पडी है जो नाना प्रकारसे शोध वीनकर धीरता और सावधानीसे रसोई बनायें, तथा और और कार्य भी सावधानी और शुद्धतापूर्वक करें ? कभी कभी तो ऐसा देखा जाता है कि स्त्रियां तो शुद्ध आचारयुक्त होती है और अपने रसोई आदि कार्य्योंको इस प्रकार करती है, जिसमें हिंसादिक दोष टलें और संयम सधे। क्योंकि या तो वे इसे शास्त्रोंमें पढ़ कर जान लेती है या विद्वानोंके उपदेशोंमें सुन लेती हैं, और विचारती है कि यदि हम प्रमाद और अज्ञानतासे हिंसादिक पंच पाप उपार्जन करेंगी तो इसका कडुआ फल हमें ही भोगना पडेगा। पति तो घरके काम देखने आते नहीं, जो कुछ पाप होगा हमारे सिर होगा। इसलिये वे कर्मकांडकी वडी ही अनुकूलता रखती है—चूल्हे चोकेकी शुद्धता, शरीर वस्त्रादिक की पवित्रता, रसोईकी सामग्रीकी मर्यादा तथा वर्तनादिकी स्वच्छताका ध्यान रख भोजन तैयार करती है; परन्तु पुरुषोंका आचार ऐसा भ्रष्ट हो रहा है कि जूता पहिने, बाजारके कपडोंसे, दुकान पर या चौकेके वाहिर ही, अथवा

हलवाईजीकी दुकानपर ही, शुद्ध अशुद्ध मिठाई या दूसरी सामग्री, बडे प्रेमसे उदर-देवकी भेंट करते हैं। फिर भी ऐसी स्त्रियां समाजमें हजार पीछे दो चार ही होंगी जो शास्त्रानुकूल भोजन बना खिला सकती हों। इसी लिये अपनी बहिनोंसे प्रार्थना है कि वे अपनी जिम्मेदारीके कामोंको भले प्रकारसे करें, और अपने पतियोंको भी उनसे (भले कामोंसे–चौंके चूल्हेकी बातोंसे ?) प्रेम कराएं। क्योंकि चूल्हा चक्की और ओखली आदिके कार्योंमें प्रमाद या असावधानी करनेका पाप स्त्रियोंके सिर होता है।

यह तो सभी जानते हैं कि पुण्यका फल सुख और पापका फल दुख है। पापोंसे इस जीवनमें ही नाना कष्ट भोगना पडते है। फिर भविष्यमें नारकी या तिर्यच होना पडता है, जिनमें नाना प्रकारके असह्य कष्ट भोगना होते हैं।

शास्त्रोंका कथन है कि प्रथम तो स्त्रीकी पर्याय ही निन्द्य है जो कुत्सित कर्मोंके उदयसे प्राप्त होती है, जिसने पूर्व जन्ममें मिथ्यात्व सेवन (कुगुरु कुदेव और कुधर्मका आराधन किया हो,) अभक्ष्य भक्षण या रात्रिभोजन किया हो, अन छाना पानी पिया हो, या तीव्र मायाचार किया हो, अथवा इन्हीं जैसे खोटे खोटे कर्म-समूह उपार्जन करनेसे स्त्री पर्याय प्राप्त होती है। परन्तु पुरुषोंको जन्म देनेवाली स्त्रियां, महावीर, अकलंक जैसे पुरुष रत्न उत्पन्न करनेवाली स्त्रियां, वे ही

निंद्य पर्य्याय स्त्रिया, अपना कर्तव्य पालन करके, आत्म कल्याण करनेके साथ ही साथ, संसारके साम्हने अपना आदर्श रख गई है।

हरिवंश पुराणसे जाना जाता है कि जब नेमिनाथ भगवान अपने विवाहकालमे बारातसहित ससुराल जा रहे थे तब एक बाडेमें बहुतसे पशुओंको घिरे हुए देखकर सारथीसे उनके घेरे जानेका कारण पूछा। सारथीने बताया कि बारातमें आये हुए अनेक मांसाहारी राजाओंके भोजनार्थ ही यह रोके गये है। सारथीका उत्तर और पशुओंका क्रन्दन सुन भगवानने अवधिज्ञानके द्वारा कृष्णका प्रपंच जाना और तब सोचने लगे—धिक्कार है इस वेश्या सी चंचल राज लक्ष्मीको और इन रोगसे भोगोंको, जिनके कारण महान पुरुष भी निर्भय हो पापकार्य्योंमें दत्त चित्त हो जाते है। फिर विवाह कृत्योंको जैसेके तैसे छोड, कंकण आदिको तोड मरोड, गिरनार पर्वत पर जा, द्वादशानुप्रेक्षाका चिन्तवन करने लगे। जब राजुलको (राजा उग्रसेनकी पुत्री और श्रीनेमिकी अर्द्ध परिणीता पत्नीको) यह खबर मिली जो कि अब तक नेमि जैसे सुयोग्य पतिकी प्राप्तिपर, हर्षके मारे विह्वल हो रहीं थीं, बडी ही खेद खिन्न हुई। और कहने लगीं, हाय! क्षणभरमें यह क्या का क्या हो गया भगवन! हायरे कर्मोंके विचित्र चरित्र, बलिहारी तेरी! एक तो स्त्री पर्य्याय पाई, फिर यह ठीक विवाहहीके समय पतिवियोग! और सो

भी थोडे समयको नहीं, जीवन पर्य्यन्तको ! अब क्यों न ऐसा उपाय करूं, जिससे इस संसारके इंद्रजालसे—इन मीठे मीठे विषहरे प्रलोभनोंसे छूट जाऊं, संसारके जन्ममरणसे छुटकारा पाऊं। यह विचारते ही उन्होने अर्यिकाके व्रत धारण किए और कालावधि पर समाधि-मरण कर सोलहवें स्वर्गमें अच्युतेन्द्र हुई।

जो स्त्रिया श्रावक कुल, जैन धर्म और सब प्रकारकी सामग्री पा करके भी अपना कल्याण नही करती, किन्तु नित्य सांसारिक रगडो झगडोंमे ही आनंद मनाया करती है, वे मानों अमृत छोड विष पीती है; उनके लिए 'खांड भरे भुस खात है' की कहावत चरितार्थ होती है। जिस प्रकार मूर्ख मनुष्य काग उडानेके लिए चिंतामणि रत्नको कंकर समझ फेंक देता है और फिर दुखी होता है, ऐसे ही जो स्त्रियां कुल, धर्म आदि सारी सामग्री पाकर भी अपना हित नहीं करतीं—उसका दुरुपयोग करती हैं वे उस मूर्ख मनुष्य जैसी दुखी होती हैं। क्योंकि उक्त सामग्रीका दुरुपयोग नर्कमें ले जानेवाला है, जहां छेदन भेदन, मारन ताडन आदि नाना कष्ट सहना होते हैं, जिनका केवल स्मरण करनेसे ही रोंगटे खडे हो जाते हैं और छाती धडकने लगती है।

हमारी बहिनोंको उचित है कि वे शास्त्रोंका पठन मनन करें। सुगुरु सुदेव और सुधर्मसे अटूट प्रीति जोडे। जिसमें उनका

जाति और धर्म, तीनोंका कल्याण कर सकती है। जिस प्रकार कच्ची मिट्टीसे मनोवांछित वर्तन वन सकता है उसी प्रकार बालकोंके कोमल हृदय छुटपनमें मनमाने सांचेमें ढल सकते हैं, और उनके स्वभावका ढालना माताकी बुद्धि-मत्ता भरी शिक्षा पर अवलंवित है। वच्चोंका अधिक समय माताके पास ही वीतता है। माताके स्वभाव, माताके धर्म-कर्म, माताकी वातचीत, माताकी इच्छाएं आदि आदि वच्चेपर वह प्रभाव डालतीं हैं जो हजारों गुरुओंकी शिक्षाएं भी नहीं डाल सकती। पिताकी शिक्षा भी काम करती हैं पर वहुत थोडा। गुरु वेचारेको वच्चा उस समय मिलता है जव उसमें उसके भावी जीवनकी भलाइया और बुराइयां जड पकड लेती हैं। माताकी शिक्षाएं वच्चेपरसे उसके जीवनभर अपना प्रभाव नहीं हटातीं। नैपोलियनकी माताने उसे अपनी इच्छासे ही ऐसा अदम्य वीर वनाया था। शिवाजीकी माताने अपनी ही शिक्षासे शिवाजीको इस योग्य वनाया था कि वे एक साधारण जागीरदारसे महा-राजा कहलाए। अकेले शिवाजी या नैपोलियन ही की वात नहीं है, सैकडों और हजारों उदाहरण ऐसे हैं, कि जिनमें माताने अपनी इच्छानुसार ही अपनी सन्ततिको वना दिया है। सारांश यह कि शूर-क्रूर, विद्वान-मूर्ख जैसा भी माता चाहे अपनी सन्ततिको घड सकती है।

विद्याके सिवाय लडकियोंको गृहस्थीके कामधामोंकी शिक्षा बडी ही जरूरी है, और यह शिक्षा माताएं बडी ही सरलता पूर्वक दे सकती है, तथा चतुर माताएं देती भी है। ऐसा न समझना चाहिए कि गृहस्थीके कामधामकी शिक्षाकी क्या आवश्यकता है। वे तो अपनेआप आते रहते है। यह बात नहीं है। अपनेआप आते रहनेमें भी यदि किसी सुव्यवस्थित पद्धतिसे सिखलाया जाता रहे तो बडा ही अच्छा हो। क्योंकि अनसिखुए किसी भी कार्य्यको तनिकमें बिगाड बैठते हैं। व्यावहारिक कार्योंको सावधानी-पूर्वक पापोंसे बचाते हुए करते जाना भी एक कठिन कार्य्य है; और इसलिए उसकी शिक्षा अत्यन्त आवश्यक है। जो लडकियां छुटपनमें रसोई आदि गृहकार्य्य नहीं सीखतीं है वे ससुरालमें जाकर तिरस्कृत और दुखी होती हैं। कारण यह कि एक तो काम करनेका अभ्यास न होनेसे वह बोझ सा प्रतीत होता है—आलस्य आता है, दूसरे काम सीखा हुआ न होनेसे बिगड बिगड जाता है। तब तिरस्कार आदि सहना पडता है।

कई धनिकोंकी बहू बेटियां सोचती होंगी, और सोच सक... है, कि जब हमें ये काम करना ही नहीं पडते अथवा करना ही... पडेंगे तब फिर इनके सीखनेकी आवश्यकता क्या? पर ... ... चाहिए कि लक्ष्मी चंचला है—बादलकी परछाईं...

आज है और कल नहीं है। दुर्भाग्य न करे कि उन्हें ऐसा दिन देखना पडे। पर लोगोंको ऐसे दिन देखने जरूर पडे है। क्या आश्चर्य कि उन्हें भी इस दुःखपूर्ण भाग्य चक्रमे पडना पडे, फिर उस समय वे क्या करेंगीं? जिसने निठल्ला बैठना सीखा हो उसकी इस सकटमय अवस्थामें क्या दशा होगी? या तो भूखों मरना पडेगा या भीख मांगनी पडेगी। इसी लिये हमारा कहना है, कि खूब पढो और खूब गृहस्थीके काम-धाम सीखो। हमारे कहनेका कुछ यह आशय नहीं है कि धनिक होने पर भी तुम्हीं मजदूरके माफिक काम करती फिरो और नौकर चाकर मत रक्खो। परंतु जैसी तुम्हारी अवस्था हो वैसा काम करो। पर काम करनेका अभ्यास हमेशा रक्खो। यदि पुण्यकर्मके उदयसे संपत्ति पाई है, तो नौकर चाकरोंसे यत्नाचारपूर्वक काम लो; उन पर अच्छी देखरेख रक्खो। अपने अवकाशके समयको स्वाध्याय या लिखने पढनेमे लगाओ। जो स्त्री आप कुछ काम नहीं करती और न करनेकी उत्तम रीति जानती है वह नौकर चाकरोंसे भी भले प्रकार काम नहीं ले सकती। नौकरचाकरोंमेंसे बहुत कम ऐसे होंगे जो अपने मनसे पूरा और अच्छा काम करें। उन पर देखरेख रखनेकी बडी आवश्यकता है। जो स्त्रियां रसोईकी क्रियामें निपुण है वे कुटुम्बियोंकी प्रकृति, देश और कालके

अनुसार सदा शुद्ध रसोई करती है, जिससे कुटुम्बके लोग सदा निरोगी और सुखी रहते हैं । जो स्त्रियां पाकक्रियामें प्रवीण हैं-प्रत्येक व्यंजन नियमानुसार बनाना जानती हैं वे मानों भोजन नहीं, एक पुष्टकारी औषधि खिलाकर कुटुम्बका पोषण करती हैं; इसी लिये भोजनके सबधसे कवियोंने स्त्रियोंको माता तककी उपमा दे डाली है । सच है, गुण ही सर्वत्र पूजा जाता है ।

माता पिताका कर्तव्य, पुत्रियोंको लिखना पढना सिखाकर, अथवा खाना बनाना सिखाकर ही पूर्ण नहीं हो जाता, किन्तु उन्हें शिल्प, हस्तकला आदिके सिखानेकी भी बडी आवश्यकता है । जिन स्त्रियोंको सीना पिरौना तथा कसीदा आदि काढ़ना आता है, वे मन माना कपडा तैयार करके आप पहिनतीं और अपने कुटुम्बियोंको पहिनाती हैं । प्रत्येक स्त्रीको अँगरखा, पायजामा, कुरता, कोट, चोगा, घॉघरा, चोली आदि कपडोंकी काट छाट, सीना व कसीदा काढना, वेलबूटे बनाना, इजार बन्द गूंथना, गुलूबन्द, मोजा बनाना और गोखरू मोडना आदि कार्य्य अवश्यमेव सीख लेने चाहिये । बचपनसे इन शिल्पकार्य्योंका अभ्यास हो जानेसे आगे बहुत लाभ और सुखकी प्राप्ति हो सकती

१ सूतमें पोत मूगा आदि पिरोकर जाली पत्ता बनाना। २ कारीगरी।

है। जो स्त्रिया अज्ञानता वश शिल्पकारी नहीं सीखती उन्हें वक्त पडने पर पिसाई, पानी भराई व कताई करके बडी कठिनाईसे अपना जीवन, निर्वाह करना पडता है । प्रत्येक स्त्री हस्तकलाके काम सीख कर रुपय डेढ़ रुपय रोजका काम कर सकती और अपनी गृहस्थीकी गुजर आनन्द पूर्वक चला सकती है । इसलिये द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके अनुसार सब काम सीख लेना चाहिए ताकि वक्त पडने पर कोई काम रुका न रहे और पराधीनता न भोगनी पडे ।

जो सुशीला और भाग्यवती कन्याएं, बाल्यावस्थामें खेल कूद छोड़, अपने करने योग्य कामोंका अभ्यास करती है, उनके भविष्य–सुखमें कुछ कमी नहीं । अवकाश मिलते ही वे किसी न किसी काममें लग जाती है । काममें लगे रहनेके कारण उनका शरीर फुर्तीला और नीरोग बना रहता है ।

कन्याओंको लडकोंकी भांति ही नहीं, किन्तु उनसे बहुत ज्यादा, अपने माता पितादि गुरुजनोंकी आज्ञा पालना चाहिए । जो पुरुष, लाड़ चावमें पड़कर लड़कियोंको मूर्ख रहने देते है–उन्हे पढ़ाते लिखाते नहीं, केवल खेलने देते है, वे तो जो कष्ट उठाते हैं सो उठाते ही है, पर उन बाल बच्चोंके लिए मानो जन्म भरको दुख बांध देते हैं । अर्थात्

मूर्ख, ढीठ, और खिलाडी लडकियां, जीवन भर कभी सुखी नहीं हो सकतीं । कन्याओंको उचित है कि वे अपने माता-पिता, सास-ससुर, पति आदि गुरुजनोंकी आज्ञामें चलें-उनकी इच्छाके विरुद्ध कोई काम न करें और उन कामोंसे सदा दूर रहें, जिनसे उनकी तथा गुरुजनोंकी निन्दा हो ।

प्यारी कन्याओ, तुम कभी बुरे आचरणवाली, हठीली, झगडालू, आलसी और खराब प्रकृतिकी लडकियोंके साथ हेल मेल, (खेल-कूद, बात-चीत) तथा और भी किसी प्रकारका ससर्ग मत करो क्योंकि इससे बुद्धि बिगड जाती है । नीतिमें कहा है कि:—

सगति कीजे साधुकी, हरै और की व्याधि
सगति तजिए नीचकी आठों पहर उपाधि

इसी लिये नीतिमें गुणवानकी संगति करना श्रे[ष्ठ] कहा गया है —

जाड्यधियो हरति सिंचति वाचि सत्य ।
मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति ॥
चेत प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं ।
सत्सगति कथ किं न करोति पुसाम् ॥

अर्थ—जिस सत्सगतिके प्रतापसे बुद्धिकी जडता [दूर] हो जाती है, सत्य भाषणमें रुचि होती है, सन्मान की [वृद्धि] होती है, पाप दूर होकर चित्त प्रसन्न रहता है, औ[र]

दिशाओंमें सुकीर्ति फैलती है। तिस सत्संगकी महिमा कहा तक कही जाय। अतएव पुत्रियोंको चाहिये कि प्रातःकाल उठें, फिर स्नानादि क्रियाओंसे निश्चिन्त हो देवदर्शन, स्वाध्याय आदिमे संलग्न होवें, पीछे रसोई आदि करें। अवकाश मिलने पर सुशील बहू बेटियोंमें बैठ, वार्तालापका ढंग और चतुराईके काम सीखनेमें समय बितावें। जो स्त्रिया अथवा लड़कियाँ कुसंगतिमे पड़ जाती है, उनको पीछे बहुत कडुवे फल भोगने पडते हैं। जहा कहीं कुसंगतिका प्रभाव पडा और स्त्रियां निर्लज्ज हुई। फिर उन्हें, क्या कुटुम्बियों और क्या सम्बन्धियों, सभीकी दुतकार सहनी पड़ती है। किसी प्रकार कुत्ते बिल्लियों जैसा कष्टमय तथा निरादर पूर्ण जीवन बिताती हैं।

प्यारी भगिनियो! तुम अपने हानि लाभका विचार सदैव किया करो। नित्य अपने आगे पीछेकी बातें सोचा करो। विचार करो कि तुम्हारे जीवनका उद्देश्य क्या है? कभी बुरी संगतिमे मत पडो, और ग्रहस्थीके छोटे बडे सभी कामोंका अभ्यास करती रहो, जिससे तुम्हें कभी शोक करनेका मौका न आए।

ऊपर कही हुई बातोंके सिवाय बालिकाओंको बालकोंकी ही भांति धर्म-शिक्षण देना आवश्यक है। उन्हें बचपनसे ही मातृभाषा समझनेके साथ ही साथ पंच नमस्कार मत्र,

दर्शन, मगल, पूजन और पद-विनती आदि अनेक पाठ तथा लौकिक नीतिकी शिक्षा देनी उचित है, जिसके अनुसार चलकर वे दोनों कुलोंकी कीर्ति फैलावें—किसी प्रकारके कुमार्गमें पग न बढावें।

लोकोक्ति है कि पुत्री पराये घरका धन है अर्थात् कन्याका पालन-पोषण तो माता पिता करते है परन्तु विवाह होजाने पर उसे कुललक्ष्मी बन कर ससुरालमें रहना पडता है। और यह ठीक भी है। ससुरालमें ऐसा वर्ताव करना चाहिए कि, जिससे माता-पिता आदि पीहर वालोंकी प्रशंसा हो। जबतक पुत्रीका विवाह नहीं होता, माता पिता उसके अधिकारी है, किन्तु भांवर पडते ही पति और पतिके माता-पिता, उस बहू नाम धारिणी कन्याके अधिकारी हो जाते हैं। माता पिता या भाई आदिका कर्तव्य है, कि वे किसी योग्य, सुन्दर, सर्वावयव, बलवान, विद्वान, कुलीन और समुचित वयवाले वरके ही साथ कन्याका सम्बन्ध करें। मूर्ख, वृद्ध, बाल, रोगी, व्यसनी अथवा नपुसक आदि वरोंके साथ कन्याका सम्बन्ध कर देनेवाले व्यक्तियोंकासा अधर्मी नर-पशु दूसरा नहीं है। फिर चाहे यह विरुद्ध सम्बन्ध, पैसेके लालचसे किया जाय अथवा किसी दूसरे कारणसे।

जो निर्बोध बच्ची तुम्हे अपना जानती है, तुम्हारी

आज्ञाओंका पालन करती है, प्रत्येक कष्टमें तुमसे आश्वासन और सहायता-पूर्ण सहायता पानेकी आशा रखती है; तुम पर अपना सारा विश्वास रखती है; हाय! क्या वही भोली भाली बच्ची तुम्हारे ही द्वारा दुःखसागरमें ढकेल दी जायगी? अयोग्य पतिके गले बाध दी जायगी? हाय हाय! यदि ऐसा हुआ तो कहना होगा कि तुममें मनुष्यत्व नहीं; तुम मनुष्यवर्गमें रहने योग्य नहीं। जाओ, जंगलमें जाओ और सिंह भालुओंके साथ रहो। मनुष्य कहलानेका तुम्हें कोई अधिकार नहीं है।

थोडे विचारकी बात है कि एक ऐसा आत्मा जो तुम्हारे ही जैसा सुखाभिलाषी है-तुम्हारे ही जैसा दुःखोंको देख भागता है-एक ऐसी व्यक्ति जो तुम्हें पिता, माता, भाई आदि स्वर्गीय शब्दोंसे सबोधित करती है; जो तुम्हारी ही प्रतिकृति है; जो तुम्हारे ही कलेजेका टुकड़ा है; उसे ही हे भाइयो और हे भगिनियो! हे नृशंस माता पिताओ! एक बूढ़ेके गले मढने पर, तुम पर आसमान नहीं फट पडता! एक रोगी या नपुसकके ... समय तुम पर बिजली नहीं आगिरती! एक ... मूर्खकी जीवन संगिनी ब... लज्जा न... धिक्कार है इस लोभको; ... इन चंच... टुकडोंको, और धिक्कार ... होनेव...

जातिके नेताओ ! अपनी जीभको वशमें करो; लड्डुओंका मोह छोडो और इस गुडियोंके खेलको इस बकरियोंकी बिक्रीको-बन्द करो । बहुत हुआ, ज्यादा पाप न कमाओ । कन्याए तुम्हारे ही जैसी सैनी जीव हैं, उनको हृदय है । उन्हें सुख दुखका ज्ञान होता है । उन्हें आह होती है । और आहमें अचूक असर होता है । तुलसीदासजीने एक स्थानमे कहा है:—

तुलसी हाय गरीबकी, कबहु न निष्फल जाय ।
मुए चामकी आह ते, लौह भस्म ह्वै जाय ॥

खूब स्मरण रक्खो, कि किसी दूसरेको कष्टमें डालके तुम कभी सुखी नहीं हो सकते । तुम ऊपरसे सुखी चाहे भले ही दिखो, पर तुम्हारा हृदय दुःखाग्निमें निरन्तर जलता रहेगा कभी शान्त न होगा ।

योग्य धार्मिक रीतिसे ब्याही हुई वधू-संज्ञक-कन्या अपने पतिकी अनुगामिनी होकर रहे । सास-ससुर, जेठ—जेठानी और देवर-देवरानी आदिसे प्रेम और नम्रतासे वर्ताव करे । आवश्यक सेवा सम्हाल भी करे । सबकी उचित लाज भी रखे जो आवश्यक है + । कभी कारण

+ इस लाज शब्दका पाठक पाठिकाए यह अर्थ न निकालें कि सवा हाथका घूंघट निकालना, दिन रात घरके अंधेरे कोनेमें घुंधे रहना, किसीसे खुलकर बात चीत न करना, और ऐसे ही ऐसे अनेकों अनर्थ करके या तो क्षयकी शिकार हो जाना और या किसी दूसरी आपत्तिमें फंस जाना ।

—संशोधक ।

आज्ञाओंका पालन करती है, प्रत्येक कष्टमें तुमसे आश्वासन और सहायता-पूर्ण सहायता पानेकी आशा रखती है; तुम पर अपना सारा विश्वास रखती है; हाय! क्या वही भोली भाली बच्ची तुम्हारे ही द्वारा दुःखसागरमें ढकेल दी जायगी? अयोग्य पतिके गले बांध दी जायगी? हाय हाय! यदि ऐसा हुआ तो कहना होगा कि तुममें मनुष्यत्व नहीं, तुम मनुष्यवर्गमें रहने योग्य नहीं। जाओ, जंगलमें जाओ और सिंह भालुओंके साथ रहो। मनुष्य कहलानेका तुम्हें कोई अधिकार नहीं है।

थोडे विचारकी बात है कि एक ऐसा आत्मा जो तुम्हारे ही जैसा सुखाभिलाषी है-तुम्हारे ही जैसा दुःखोंको देख भागता है-एक ऐसी व्यक्ति जो तुम्हें पिता, माता, भाई आदि स्वर्गीय शब्दोंसे संबोधित करती है; जो तुम्हारी ही प्रतिकृति है; जो तुम्हारे ही कलेजेका टुकड़ा है, उसे ही हे भाइयो और हे भगिनियो! हे नृशंस माता पिताओ! एक बूढेके गले मढने पर, तुम पर आसमान नहीं फट पडता! एक रोगी या नपुंसकके हाथ सौंपते समय तुम पर बिजली नहीं आगिरती! एक अयोग्य या मूर्खकी जीवन संगिनी बनानेमें तुम्हें लज्जा नहीं आती? धिक्कार है इस लोभको; धिक्कार है इन चंचल चांदीके टुकडोंको; और धिक्कार है इस पैसेसे होनेवाले सुखको;

जातिके नेताओ ! अपनी जीभको वशमे करो; लड्डुओंका मोह छोडो और इस गुडियोंके खेलको इस बकरियोंकी विक्रीको-बन्द करो । बहुत हुआ, ज्यादा पाप न कमाओ । कन्याए तुम्हारे ही जैसी सैनी जीव हैं, उनको हृदय है । उन्हें सुख दुखका ज्ञान होता है । उन्हें आह होती हैं । और आहमें अचूक असर होता है । तुलसीदासजीने एक स्थानमे कहा है:—

तुलसी हाय गरीबकी, कबहु न निष्फल जाय ।
मुए चामकी आह तें, लोह भस्म ह्वै जाय ॥

खूब स्मरण रक्खो, कि किसी दूसरेको कष्टमें डालके तुम कभी सुखी नहीं हो सकते। तुम ऊपरसे सुखी चाहे भले ही दिखो, पर तुम्हारा हृदय दुःखाग्निमें निरन्तर जलता रहेगा कभी शान्त न होगा ।

योग्य धार्मिक रीतिसे व्याही हुई वधू-संज्ञक-कन्या अपने पतिकी अनुगामिनी होकर रहे । सास-ससुर, जेठ—जेठानी और देवर-देवरानी आदिसे प्रेम और नम्रतासे बर्ताव करे । आवश्यक सेवा सम्हाल भी करे । सबकी उचित लाज भी रखे जो आवश्यक है+। कभी कारण

+ इस लाज शब्दका पाठक पाठिकाएं यह अर्थ न निकालें कि सवा हाथका घूघट निकालना, दिन रात घरके अंधेर कोनेमे बैठे रहना, किसीसे खुलकर बात चीत न करना, और ऐसे ही ऐसे अनेकों अनर्थ करके या तो क्षयकी शिकार हो जाना और या किसी दूसरी आपत्तिमें फँस जाना ।

होने परभी कलह न करे। यदि अनुचित वर्ताव भी होवें तो उसे शान्तिसे सहन करे। और अपनी चतुराई, नम्रता या व्यवहार कुशलतासे उस कलहके कारणको ही मिटादे। यह थोडासा गृह-कलह क्या क्या खेल दिखलाता है सो हमारे शास्त्रोंमें खूब वर्णित है। जिस घरमें लडाई झगडे हुआ करते हैं, वहासे सारी ऋद्धि सिद्धियां चल बसती है—तुलसीदासजीने एक स्थानमें कहा है "जहा सुमति तहँ सम्पति नाना, जहां कुमति तहँ विपति निदाना॥" इसके सैकड़ों दृष्टान्त प्रत्यक्ष देखनेमें आते हैं विशेष कहनेकी आवश्यकता नहीं है।

स्त्रियोंका पातिव्रत धर्म पालन करना पहिला और सर्व श्रेष्ठ कर्तव्य है। पतिव्रता स्त्रियोकी कीर्तिसे ही आज तक भारत, नैतिक आदर्शमें सबसे आगे है। जैसे मोतीका पानी-आब-के कारण मूल्य है वैसे ही स्त्रीका पातिव्रतके धर्मरूपी पानीके कारण मूल्य है। यद्यपि सती पतिव्रताओंको अपने इस उज्वल धर्मकी, इस अनोखे रत्नकी, रक्षाके निमित्त बडे बड़े कष्ट सहना पड़े है, पर धन्य है उन देवियोंको कि, जिनने सब सहा, पर अपने पातिव्रत धर्मको न छोडा। सीताने अपने इसी धर्मकी रक्षाके लिए कठिन वनमें जाना स्वीकार किया; रावणके बन्दीगृहके कष्टोंको भी कुछ न समझा, और अन्तमें इसी पातिव्रत-धर्मकी परीक्षा निमित्त

अग्निकुंडमें प्रवेश किया। पर वाहरे शीलधर्म! तूभी क्या वस्तु है! कि देवोंने उस अग्निको सरोवर वनाके सीतादेवीका यश, चिरकालके लिए ध्रुव कर दिया। क्या सीता जैसी सतियाँ, संसारमें पुनः पैदा हो सकती है? क्या वर्तमान कालकी स्त्रियोंमेंसे कोई अपनी छाती पर हाथ रखके यह कह सकती है, कि यदि कर्मयोगसे उसपर सीता ही जैसी विपत्ति पड़े तो वह अपने शील धर्म पर आच न आने देगी? मैना सुन्दरी जैसी परम पतिव्रता स्त्री सराहने योग्य है, जिसने अपने कोढी पति श्रीपाल और उनके ७०० अंग-रक्षक योद्धाओंका अपने मनोयोग और अपनी अप्रतिम सेवा सुश्रूषासे कुष्ट रोग दूर किया था। सती अंजनाने भी २२ वर्ष तक अपने पति द्वारा घोर तिरस्कार और कष्ट पाया, पर अपना स्नेह और धर्म जहा का तहा अटल रक्खा। अन्तमें अपनी इस कठिन तपस्याका फल पतिप्रेमके रूपमें पाया था।

कुलवती नामक एक सतीने पतिकी आज्ञासे अपना सारा जेवर पिताके यहां रख दिया और अनेक कष्टदायक सुदूर विदेशमें अपने पतिके साथ चली गई। आज तो कुछ विचित्र ही अवस्था है। स्त्रिया सब कुछ छोड सकतीं हैं पर जेवर नहीं छोड सकतीं। अनेक स्त्रिया तो अपने पतियोंको गहनोंके हेतु ऐसा तग करती हैं कि

हो जाते है। ऐसा विचार कर व्यभिचारको दूरसे ही छोडो और शील-व्रतको तनमनसे निरतिचार पालो; जिससे तुम सांसारिक सुखोंके अतिरिक्त मोक्ष सुखकी अधिकारिणी होओ।

शीलगुणके साथ ही साथ स्त्रियोंको शान्त स्वभावी और विनयी होना आवश्यक है। बुद्धिमती स्त्री वही है जो अपने सुस्वभावके कारण सारे कुटुम्बको प्रिय होती है, सबसे प्रिय वचन बोलती तथा सबका आदर करती है; किसीके कटु वचन सुननेपर भी क्रोध नहीं करती और सदा काल हँसमुख रहती है। जिससे उसकी ही नहीं किन्तु उसके माता पिताकी भी प्रशंसा होती है। कोई कोई कर्कशाएं अपने कुटुम्बसे तथा पतिसे सदा नाराज रहतीं है, कभी भी प्रेमसे नहीं बोलती। यदि बोले भी तो शेरनीकी तरह खानेको दौड़ती है; परन्तु अन्य जनोंसे बड़े प्रेमसे बोलती हैं, ये लक्षण कुलटा स्त्रियोंके हैं। कोई कोई स्त्रिया तो ऐसी जड बुद्धि होती है, कि घरकी देवरानी, जिठानी, सास और ननँद आदिसे बैर बांधती, बोलती तक नहीं, पर दूसरी अयोग्य स्त्रियोंसे बडाही संबंध रखती है, ऐसी स्त्रियोंकी गृहस्थी शीघ्र ही बरबाद हो जाती है और वे जन्म भर दुख भोगती है। उन्हें चाहिए कि ससुरको पिताके और सासको माताके समान समझें। तथा अन्य कुटुम्बी जनोंको

यथोचित आदर, स्नेह और विनयकी दृष्टिसे देखे। सबसे प्यारसे बोलें और उनकी उचित आज्ञाओंको, भूलकर भी न टालें। स्त्रियोंको विचारनेकी बात है कि हमारे पतिके बचपनसे ही सास ससुर यह बात विचार कर खुश होते हैं, कि वहू आकर घरका सब काम सम्हालेगी और हमारी सेवा करेगी। इसी हेतु उन्होंने तन, मन और धन संबंधी नाना कष्ट भोगकर भी तुम्हारे पतिकी सेवा की है। उन्हे यही आशा थी कि ये हमारे बुढापेमें काम आवेंगे, अब उनकी गिरती अवस्थामें उनकी सेवा करनेका-उनको की हुई सेवाके प्रति फल देनेका-अपने कर्तव्य पालनेका--अवसर आया है। तुम्हारा सौभाग्य है, कि सास ससुर आदि गुरुजनोंके कारण तुम्हारी गृहस्थी सुशोभित हो रही है। सदा हर्ष पूर्वक उनकी सेवा करो, जिससे उनका मन किंचितभी दुखी न होने पावे। तुमको इतना तो विचारना चाहिए कि तुम्हारे सास ससुर अपने लड़केको अर्थात् तुम्हारे पतिको पालनपोषण करके हृष्ट पुष्ट और पढ़ा पढा करके गुणवान न करते तो आज तुम अपने पतिका ऐसा सुख कहांसे भोगतीं ? ऐसे ही अनेक कारण है, जिनसे सास ससुरका तुम्हारे ऊपर बडा उपकार है। जो स्त्रियां ऐसे परमोपकारको भूल जाती हैं, और उनकी सेवा टहल नहीं करतीं वे दुष्टाए कृतघ्न और निन्दनीय हैं।

जो स्त्रियां अपने दुष्ट स्वभावके कारण गुरुजनोंकी सेवा नहीं करतीं, वृद्धावस्थामें उनका निरादर करतीं, कठोर वचन कहतीं-गालियां देतीं-दुतकारतीं-अति परिश्रमका काम लेतीं-पेटभर खानेको नहीं देतीं, और जो देती भी तो रूखा सूखा और बुराभला—अथवा रुपये-पैसे, कपडे-लत्ते आदिसे तंग करती है, वे मूर्खाएं वृद्ध होनेपर, अपनी वहूवेटियों द्वारा ठीक इसी तरह कष्टित और तिरस्कृत होती है। संभवतः निस्सन्तान होतीं, और एक न एक आधिव्याधिके पाले पडी ही रहती है। अतएव प्रत्येक बहूवेटीको ऐसा वर्ताव करना चाहिए, जिससे कुटुम्बकी सुख सम्पत्ति वढे। घरमें जैसी कुछ रूढि चल जाती है फिर घरके छोटे वडे सब उसीके अनुसार चलने लगते है। इस विषयमें एक छोटीसी कथा इस प्रकार है, कि कंचनपुरनामक नगरमे एक कुटुम्ब रहता था। जिसमें सेठ धनपाल, सुभद्रा सेठानी, वसुपाल पुत्र और अविनीता नामक पुत्र वधू थी। एक समय सेठ धनपालने, अपनी अति वृद्धावस्था जानकर, घरका सब कारोबार अपने पुत्र वसुपालको सौंप दिया; और आप शेष आयु निराकुलतासे धर्म ध्यानपूर्वक व्यतीत करनेको उद्यत हुए। थोडे दिन व्यतीत होते ही पुत्र वधू अविनीता अपने पतिको सर्वस्वका स्वामी समझ अभिमानमें आ गई और मूर्खतासे सास ससुरका तिरस्कार करने लगी।

उन्हें रसोईमेंका वचाखुचा रूखा सूखा भोजन देने लगी सो भी मिट्टीके ठीकरोंमें और तनिक सा। उतनेसे भोजनमें उनका पेट भरेगा कि भूखे रहेंगे, इसकी उसे चिन्ता नहीं थी। उनके पहिनने, ओढ़ने और बिछानेको भी फटे पुराने कपड़े दे, नाना प्रकारके तिरस्कारपूर्ण वचन कहे, इस प्रकार वेचारे सेठ सेठानी अति दुखी हो गए। वसुपाल भी माता पिताकी कभी सुधि न ले क्योंकि वह पक्का स्त्री-भक्त था। देखो तो ससारका स्वार्थ, कि जिन माता पिताने जन्म दिया, वचपनसे पालापोषा और पढा लिखाकर योग्य वनाया, उन्हींके लिए यह व्यवहार, उन्हींकी यह दशा, खेद। कितने ही पूज्य पुरुषोंकी इसी प्रकार पत्नी-सेवक कुपूतों द्वारा अवमानना हो चुकी है, हो रही है और होगी। सेठ वेचारेने तो शान्तिमय जीवन विताना चाहा था, पर यह सारे संसारकी अशान्ति मानो उसपर टूट आई। भाग्यसे वसुपालको पुत्र-प्राप्ति हुई। पुत्रका नाम रक्खा गया गुणपाल। गुणपाल जव वडा हुआ तो श्रीनगरके सेठ जिनदासकी पुत्री विनयसुन्दरीके साथ विवाहा गया। सेठ जिनदास वडे धर्मज्ञ और अनेक शास्त्रोंके मर्मज्ञ थे। उन्होने अपनी पुत्री विनय सुन्दरीको लौकिक और धार्मिक दोनों प्रकारकी शिक्षाए भली भाति दिलाई थीं, जिससे उसके गुण अन्य पुत्र पुत्रियोंके लिए

उपमा देने योग्य हो गए थे। जब यह विनयसुन्दरी, पतिके घर आई, तो अपनी सास अविनीताका चरित्र देख दंग हो गई। परन्तु करे क्या, प्रथम तो सासूकी विनयका ध्यान, दूसरे नवागता होनेके कारण प्रत्येक बातके कहनेमें संकोच। परन्तु उसे अपने अजिया ससुर (पतिके दादा) और अजिया सास (पतिकी दादी) का दुख देख कर चैन न पड़े। वह और सभी बातोंसे चित्त हटा कर सदैव इस बातके विचारमें दत्तचित्त रहने लगी, कि किस उपायसे इनका दुख दूर करूं। पढी लिखी और विद्वान तो वह थी ही, एक युक्ति उसने निकाल ही ली। अर्थात् वे ठीकरे जो उन वृद्ध दुखियाओंके भोजन कर लेनेपर फेक दिए जाते थे, जोड़ जोड़ कर घरके एक कोनेमे रखने लगी। एक दिवस अविनीताने उन घड़ोंके टुकड़ोंको इकट्ठा देख विनयसुन्दरीसे पूछा—ये तूने क्यों इकट्ठे किये हैं? उसने विनयपूर्वक उत्तर दिया कि सासूजी! अपने कुलकी रीति तो करनी ही पड़ेगी; उसीकी ये तैयारी है। आप और ससुरजी भी कभी बूढे होंगे तब रूखा सूखा भोजन परोसनेके लिए इन ठीकरोंकी जरूरत पडेगी। इसी लिए इन्हें एकत्र कर रही हू। सुनकर अविनीताकी आखें खुल गईं। उसने उसी घडीसे सास ससुरके खान पान और पहिनने ओढनेका उत्तम प्रबन्ध कर दिया,

और अपने पतिको भी उनकी सेवा करनेके लिए उत्साहित किया। फिर तो सेठ सेठानी धर्ममें तत्पर हुए। ये सब करतूतें विनयसुन्दरीके सद्गुणोंकी थीं, जिनके कारण कुटुम्बमें उत्पन्न हुआ एक महाकुलक्षण शान्त हो गया। सेठ सेठानीने सन्तुष्ट होकर विनयसुन्दरीको लौकिक पारलौकिक सुखोंकी प्राप्तिके लिए आशीर्वाद दिया।

स्त्रीको अपने पतिकी आज्ञाकारिणी और उसके सुख दुखकी साथिन होना योग्य है क्योंकि पतिके सुखी रहनेसे ही स्त्रीका जीवन सफल है। जिस प्रकार प्राणियोंके शरीरका मूलभूत जीव है, उसी प्रकार स्त्रीका मूलभूत पति है। पतिके विना स्त्रीका जीवन वृथा है। इस हेतु पतिको सदैव प्रसन्न रखना स्त्रीका कर्तव्य है। स्त्रीको कभी भी पतिकी आज्ञा भंग नहीं करनी चाहिए। सदैव उसके योग्य-सत्कार और विनयका ध्यान रखना चाहिए। कभी भी पतिसे कड़े स्वरमें नहीं बोलना चाहिए। पतिके आसनसे ऊँचे आसन पर भी कभी न बैठना चाहिए। पतिके नाराज होनेपर स्त्रीको शान्ति धारण करनी चाहिए। क्योंकि स्त्रीके शान्त न रहनेपर कलह बहुत बढ जाता है। जब पतिका क्रोध ठंडा पड जाय तब नम्रतापूर्वक ठीक ठीक बात समझावे। यदि अपना अपराध निकले तो पतिसे क्षमा मांगे। जब पति दो चार मनुष्योंके पास बैठ, बातचीत करता हो, तो किसी वस्तुके

उपमा देने योग्य हो गए थे। जब यह विनयसुन्दरी, पतिके घर आई, तो अपनी सास अविनीताका चरित्र देख दंग हो गई। परन्तु करे क्या, प्रथम तो सासूकी विनयका ध्यान, दूसरे नवागता होनेके कारण प्रत्येक बातके कहनेमें संकोच। परन्तु उसे अपने अजिया ससुर (पतिके दादा) और अजिया सास (पतिकी दादी) का दुख देख कर चैन न पड़े। वह और सभी बातोंसे चित्त हटा कर सदैव इस बातके विचारमें दत्तचित्त रहने लगी, कि किस उपायसे इनका दुख दूर करूं। पढी लिखी और विद्वान तो वह थी ही, एक युक्ति उसने निकाल ही ली। अर्थात् वे ठीकरे जो उन वृद्ध दुखियाओंके भोजन कर लेनेपर फेंक दिए जाते थे, जोड़ जोड़ कर घरके एक कोनेमें रखने लगी। एक दिवस अविनीताने उन घडोंके टुकड़ोंको इकट्ठा देख विनयसुन्दरीसे पूछा—ये तूने क्यों इकट्ठे किये हैं? उसने विनयपूर्वक उत्तर दिया कि सासूजी! अपने कुलकी रीति तो करनी ही पड़ेगी, उसीकी ये तैयारी है। आप और ससुरजी भी कभी बूढे होंगे तब रूखा सूखा भोजन परोसनेके लिए इन ठीकरोंकी जरूरत पड़ेगी। इसी लिए इन्हें एकत्र कर रही हूं। सुनकर अविनीताकी आखें खुल गईं। उसने उसी घडीसे सास ससुरके खान पान और पहिनने ओढनेका उत्तम प्रबन्ध कर दिया,

और अपने पतिको भी उनकी सेवा करनेके लिए उत्साहित किया। फिर तो सेठ सेठानी धर्ममें तत्पर हुए। ये सब करतूतें विनयसुन्दरीके सद्गुणोंकी थीं, जिनके कारण कुटुम्बमे उत्पन्न हुआ एक महाकुलक्षण शान्त हो गया। सेठ सेठानीने सन्तुष्ट होकर विनयसुन्दरीको लौकिक पारलौकिक सुखोंकी प्राप्तिके लिए आशीर्वाद दिया।

स्त्रीको अपने पतिकी आज्ञाकारिणी और उसके सुख दुखकी साथिन होना योग्य है क्योंकि पतिके सुखी रहनेमे ही स्त्रीका जीवन सफल है। जिस प्रकार प्राणियोंके शरीरका मूलभूत जीव है, उसी प्रकार स्त्रीका मूलभूत पति है। पतिके विना स्त्रीका जीवन वृथा है। इस हेतु पतिको सदैव प्रसन्न रखना स्त्रीका कर्तव्य है। स्त्रीको कभी भी पतिकी आज्ञा भग नहीं करनी चाहिए। सदैव उसके योग्य-सत्कार और विनयका ध्यान रखना चाहिए। कभी भी पतिसे कड़े स्वरमें नहीं बोलना चाहिए। पतिके आसनसे ऊँचे आसन पर भी कभी न बैठना चाहिए। पतिके नाराज होनेपर स्त्रीको शान्ति धारण करनी चाहिए। क्योंकि स्त्रीके शान्त न रहनेपर कलह बहुत बढ जाता है। जब पतिका क्रोध ठंडा पड जाय तब नम्रतापूर्वक ठीक ठीक बात समझावे। यदि अपना अपराध निकले तो पतिसे क्षमा मांगे। जब पति दो चार मनुष्योंके पास बैठ, बातचीत करता हो, तो किसी वस्तुके

लानेकी बात न कहे, न कहलावे। यदि किसी वस्तुकी आवश्यकता हो तो उचित समयमें अच्छे ढंगसे कहे और प्रत्येक व्यवहार ऐसी नम्रता और सुशीलतासे करे कि पतिका चित्त प्रसन्न और सन्तुष्ट रहे । यदि घरमें सुयोग्य गृहणी हो तो पति बाहिरसे कैसा ही खेदखिन्न आवे, घरमें आते ही प्रसन्न हो जायगा । कोई मूर्ख स्त्रिया पतिके भोजन करते समय अपने गहनोंका प्रस्ताव छेडती है, कोई किसी वस्त्र बनवानेके लिये कहती है, अथवा देवरानी-जेठानीकी घी-तेल, और अनाजकी तथा न जाने कहा कहाकी जिक्र छेड़ती हैं कि, जिससे पति भरपेट खा भी नहीं सकता। या तो उस समय बिलकुल मौन रहना चाहिए अथवा कोई धार्मिक या व्यावहारिक कथा छेडनी चाहिए। पर खूब स्मरण रहे, कि उस कथामें शोक, दुःख, चिन्ता घृणा आदि बिलकुल न हो, किन्तु प्रेम, धर्म, नीति, किंचित हास्य आदिकी मात्रा हो। साराश यह कि भोजन करते कराते समय पति पत्नी खूब प्रसन्न रहें। जो स्त्री अपने पतिके सुखमें सुखी और दुःखमें दुखी होती है—उसे प्राणाधिक समझ सेवामें तत्पर रहती है वही कुल-लक्ष्मी है—वही सती पतिव्रता है । यदि पतिको व्यापारमें हानि हुई हो या कोई दैवी आपत्ति आई हो, तो स्त्री अपने वस्त्राभूषणोंका मोह छोड़ दे और यदि उनसे पतिकी कीर्ति रहती हो तो रक्खे—इज्जत बचावे। अपने घरकी बात भूल-

कर भी बाहिर न कहे। घरमेंसे न देने योग्य ऐसी कोई चीज किसीको न दे अथवा न वेचे, जिसपर पति आदि कुटुम्बियोंके रुष्ट होनेकी संभावना हो। सदा अपने गृहस्थी-सम्बन्धी हानि लाभका विचार रक्खे। क्योंकि पति कैसा ही कमाऊ क्यों न हो, यदि स्त्रियां घरको सम्हालके न चलावे तो वढती नहीं हो सकती। प्रत्येक स्त्रीका कर्तव्य है कि खर्च बड़ी ही सावधानी और चतुराईसे करे; सदैव समुचित बचत करती रहे। यदि दुर्भाग्यसे किसी स्त्रीको व्यसनी, आलसी, और अधर्मी आदि पति मिले तो उसे येन केन प्रकारेण सुमार्ग पर लावे; परलोक व धर्ममें रुचि उत्पन्न करानेका उपाय करे। किसीको धर्म मार्गपर लगा देना बड़े ही पुण्यका कार्य है, और फिर लगानेवालेमें भी इतनी योग्यता होनी चाहिए। गरज यह कि, स्त्रियोंको बचपनसे ही ज्ञान संपादन कर रखना चाहिए ताकि समय समय पर उसकी सहायतासे कठिनाइयों पर विजय पाती रहें।

स्त्रियोंको साधारण–जितनी कि उन्हें आवश्यक है–वैद्यक-विद्या सीखनेकी भी वडी आवश्यकता है। यदि इस विषयकी शिक्षा स्त्रियोंने नहीं पाई है तो अपने कर्तव्योंमेंसे एक सबसे बडा कर्तव्यपालन-सच्ची माता होना, बालबच्चोंकी रोग चर्या और औषधि आदि करना नहीं कर सकतीं और अपना भी रोगोंसे बचाव नहीं कर सकतीं।

इसी लिए इस स्थान पर कुछ ध्यान देने योग्य बातें लिखी जाती है।

(१) गर्मी—शरीरमें अधिक तापके लगनेसे हृदय सूख जाता है, जिससे मूर्खता, और दुर्बलता आदि नाना रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिये बाल बच्चोंका और अपना भी गर्मीसे बचाव करना चाहिए।

(२) सरदी—ज्वर, वात, शरीरमे दर्द, पेटमें पीड़ा इत्यादि रोग सर्दीके दोषसे होते है। उष्ण-देशके रहनेवालोंको बहुधा अधिक सरदी हो जाया करती है। इसका कारण यह है, कि वे गर्मीसे व्याकुल हो असमयमें ही शरीरको ठंड लगा देते है। अधिक परिश्रम करके आने पर शीघ्र ही कपड़े उतार डालना, अथवा जल पी लेना, ओस पडनेकी जगह सोना, सोते समय अधिक ठंड लगने देना, वर्षाकालमें शरीरको हवा लगने देना, ठंडमें कपड़ोंका कम पहिनना, शीत ऋतुमें ठंडे जलमे बहुत देर तक नहाते रहना, आदि बातोंसे सरदी हो जाया करती है। कभी कभी इस सरदीसे ही प्राणघातक रोग हो जाते है अतएव इससे बचावका सदा ध्यान रखना चाहिए।

(३) पीनेका जल—जीवन धारण करनेकेलिये जल एक मुख्य पदार्थ है बहती हुई नदी, और अधिक तर गहरे कुओंका पानी साफ होता है। जलको सदा छान कर पीना

चाहिए, जिससे कूड़ा-कचरा और जीव-जन्तु आदि पीनेमें न आवें। जलके पात्रोंको सदा ढँके रक्खो। पाखानेसे आकर कभी पानी मत पियो। भोजन करते समय भी अपनी तासीरके अनुसार पानी पीना चाहिए, जिससे कि पाचनक्रिया अच्छी हो। निराहार पानी पीने, खडे खडे पानी पीने, धूपमेंसे आकर एकदम पानी पी लेने आदिसे तिल्ली-(प्लीहा) बढ़ जानेका डर रहता है और दूसरे संघातक रोग भी हो जानेका भय रहता है। इसलिए पानीकी अशुद्धता, और दुरुपयोगसे बचना चाहिए।

(४) भोजन—यह मनुष्यके जीवनका आधार है अतः इस पर विशेष ध्यान देनेकी आवश्यकता है। भोजनका स्थान साफ हो, छतमें कीड़े मकोड़ोंसे बचावके लिए एक कपड़ा बधा हो, प्रकाश और वायुके लिए पूरा पूरा प्रबंध हो। सामग्री ऋतुके अनुसार और ताजी हो। भोजन करनेके पीछे ही नहा लेना मंदाग्निका रोग उत्पन्न करता है। भोजन करते ही काममें लग जाना भी कुछ हानिकारक है। भोजनके पीछे किंचित विश्राम लेना-दाँयें-बाँयें करवटसे लेटना चाहिए। परन्तु यह विश्राम पन्द्रह बीस मिनिटसे अधिक न हो, अथवा नींदके रूपमें भी न हो। फिर परिश्रममें लगना चाहिए। कचा, और बासी भोजन करनेसे पाचनशक्ति घटती और उदररोग पैदा होते है, बुद्धि भी न्यून होती है।

भोजन उतना ही बनाना चाहिए, जितना आवश्यक हो और बासी न बचे।

(५) वायु—प्रत्येक मकानमें वायु और प्रकाशका पूरा प्रबंध हो। पाखाना, सोने और खानेके घरसे दूर हो तथा उसके झाडने आदिका पूरा प्रबंध हो । गोशाला भी हमारे सोनेके घरसे जुदी हो। सोनेके घरमें ज्यादा और व्यर्थ-का सामान नहीं रहना चाहिए । घरके आस पास कोई ऐसी मैली नाली या गली-कूचा न होना चाहिए जो मैला रहता हो । मकान प्रति दिन पूरा पूरा झाडाफूंका जाना चाहिए। खिड़कियोंका भी यथोचित प्रबन्ध हो।

(६) निद्रा—दिनभरके परिश्रमकी थकावटको दूर करनेके लिए विश्राम लेना आवश्यक है और यह बात निद्रासे भली भांति पूर्ण हो जाती है । यथोचित निद्रा आनेसे बहुतसे रोग नहीं होने पाते। रातमें बहुत जागने या भली भांति निद्रा न लेनेसे शरीर अकड़ने लगता है, देह टूटती और आलस्य आता है, तथा काम करनेमें भी जी नहीं लगता । योग्य रीतिसे निद्रा लेना जरूरी है। सीले स्थानमें अथवा विना कुछ ओढे सोना हानिकारक है। पौ फटनेके पहिले ही शय्या त्याग देना आरोग्यप्रद है।

(७) व्यायाम याने कसरत—अंगप्रत्यंगोंको चलाये विना शरीरमें फुर्ती नहीं आती । बच्चोंको भी भले प्रकार

कुदकने और खेलने देना चाहिए; यही उनका व्यायाम है। दिनरात उन्हें गोदीमें लिए रहना जान बूझकर बीमार बनाना है। स्त्रियोंको पुरुषोंकी नाई दण्ड पेलना और बैठकें लगाना आवश्यक नहीं है, घरका झाडना बुहारना, पानी भरना, कपडे छाटना (धोना), पीसना आदि ही उनका व्यायाम है। जो स्त्रिया घरके इन कामोंके करनेसे वंचित रहती हैं वे ही प्रायः अधिक रोगी हुआ करती हैं, और थोड़े समय जीती हैं। कामधाम करनेवाली स्त्रियां नीरोग रहती है, इसलिये उन्हे इस जीवनमें सुख मिलता है; परलोकको भी नीरोग रहनेके कारण वे सुखकी कमाई कर सकती हैं।

कुछ साधारण और शीघ्र शीघ्र हो जानेवाले रोग और उनकी औषधियां भी जान लेना स्त्रियोंको जरूरी है। बचपनमें बच्चोंको दांत, ज्वर और खांसी आदि हो जाया करती हैं तथा यदि उपाय न किया जाय तो एक बडे रोगमें बदल जाती हैं। मूर्ख माताएं भूत-प्रेत या नजर आदिके भ्रममें पड, कभी कभी अपने बच्चोंसे ही हाथ धो बैठती है। कुछ रोगोंकी पहिचान और उनकी औषधियां नीचे लिखी जाती है।

सांसकी पहिचान—जब सास लेते समय बालककी नाकसे सुर जल्दी जल्दी चलकर फैलता हो तो जान लो

कि इसकी छातीमें दर्द है । छातीमें दर्द होनेसे आंखें पथराने लगती है, सांस लेनेमें पीडा होती और पेट फूल जाता है । होठ पीले पड़ जाते तथा मुंह लाल और सफेद पड़ जाता है । ऐसी अवस्थामें घबराना नहीं चाहिए, किन्तु योग्य वैद्य, डाक्टर या हकीमसे इलाज कराना चाहिए ।

आंखोकी पहिचान—जब शरीरकी हालत अच्छी होती है तो आंखे साफ रहती है । जब त्योरी बदले या आंख मैली रहे तो जानना चाहिए कि बच्चेके सिरमें, बीमारी होनेवाली है ।

नींदका न आना—जब बालकको ठीक ठीक नींद न आवे, तब जानना चाहिए कि उसका स्वास्थ्य विगड़ा हुआ है । इसी प्रकार जब बालक मामूलीसे ज्यादह रोवे; तो जानना चाहिए कि बालक बीमार पड़नेवाला है ।

खॉसी—बालकको जब सरदी होती है तब वह बार बार खॉसता है और उसकी आवाज बैठ जाती है । खांसनेसे कभी कभी पसली भी चल निकलती है ।

माता या चेचक—बच्चोंको चेचक निकलनेके पहिले टीका लगवाना याने गोदवाना आवश्यक है * ।

* हाथ पर चीरा लगवाना । इस विषयमें अनेक विशेषज्ञोंका मत है कि टीका कदापि लाभदायक नहीं है । उलटी हानिकी संभावना ही लाभसे कई गुनी अधिक है । —संशोधक ।

जो लोग लाड–प्यार या मूर्खतासे टीका नहीं लगवाते वे पीछे पछताते हैं। माता निकलनेके दो तीन दिन पहिलेसे ज्वर आता है, दिलपर घबराहट और बेहोशी होती है, तीसरे दिन बदन लाल पड़ जाता और माथेपर खसखस जैसे छोटे छोटे दाने (फुन्सियां) दिखाई देते है। यह दशा उस चेचककी है जो टीका लगानेके भी पीछे कभी कभी निकलती है। यदि टीका न लगा हो तो चेचक बड़े जोरसे निकलती है। मूर्ख स्त्रिया इसका मूल कारण तो जानती नहीं; समझती है कि यह शीतला देवीका कोप है, और इसलिए शीतला देवीकी पूजा–अर्चा किया करती है, जिससे कोई लाभ नहीं होता। माताकी बीमारी, बच्चोंमें माताके पेटकी गर्मीसे होती है। माताके पेटकी गर्मी ही कारण पाकर इस विकारके रूपमें निकलती है। इसीलिये इसका नाम ' माताकी बीमारी ' पड़ा है। तर और शीतल भोजनादि देनेसे शीघ्र और सरलता पूर्वक यह विकार निकल जाता है–शान्त हो जाता है। बुद्धिमान स्त्रिया देवियोंके मठोंमें नहीं दौड़ी फिरतीं; किन्तु समझ बूझकर इलाज करती है, और रोग शीघ्रही आराम कर लेती हैं।

यदि बालककी डूंठी (डुंडी–नाभि) पक जाय तो दीवेका (दीपकका) तेल लगावे या हल्दी, लोध (पसारियोंके यहां मिलनेवाली एक औषधि) और नीमके फूल, बारीक पीस--

कर लेप करे। यदि वालक दूध न पीता हो, तो पहिले यह जानना आवश्यक है कि किस पीडासे दूध पीना वन्द हुआ है? जिस अंग पर वालक बार बार हाथ फेरता हो, उसी स्थान पर दर्द समझकर शीघ्रही, उसका योग्य इलाज करना चाहिए। यदि हँसली चल गई हो तो दाईको बुलाकर मलवा देनेसे आराम हो जाती है। यदि कागला वढ गया हो तो चूल्हेकी राख और काली मिरच पीसकर, अंगुली पर लगा, चतुराईके साथ उसे दवा देवे।

कभी कभी वालककी आंखे गर्मी, सर्दी या दांत निकलनेके सबब दुखने लगती हैं; तब रसोत (पंसारियोंके यहां मिलनेवाली एक औषधि) पानीमें घिसकर आख पर लेप करे। आखके भीतर भी एक बूंद डाले। संभवतः तो इसी दवाईसे वालककी ऑखे अच्छी हो जायँगीं। अथवा पीली मिट्टीकी टिकियाँ वनाकर घड़ेपर रख दे, और रातको सोते समय आंख पर बांध दे। इस रीतिसे ऑखोंका दुखना शीघ्र आराम हो जाता है।

यदि वालकको खासी हो जाय तो सोते वक्त उसके मुंहमें अनारका छिलका दवा दे, अथवा भूभलमें सिके हुए—भुने हुए—वहेड़ेके छिलकेका चूर्ण वालकको चटावे। यदि वालकको पेशाबके साथ खून आता हो तो पाषाण भेद और साटा पानीमें पीसकर पिलावे। यदि दस्तमें

आँव आती हो तो वायविडंग, पीपल, अजमोद, कुड़कुडेके बीज और सफेद जीरा पानीमें पीस मिश्री मिलाकर पीनेको दे। यदि आँव खूनके साथ आती हो तो कची पक्की सौंफ पीसे और उसमें कच्ची खांड मिलाकर चूरणकी भांति खानेको दे। अथवा सोंठका मुरब्बा खिलावे। यदि बालकको ज्वर आता हो तो ऐसी दवा देनी चाहिए, जिससे कुछ दस्त होकर पेटका विकार निकल जावे।

दाँतोंको सहज रीतिसे निकालनेका यह उपाय है कि धावडेके फूल और पीपलको आंवलेके रसमें मिलाकर बच्चेके मसूड़ों पर मले। यदि पेशाब बन्द हो गई हो तो टेसूके (पलाश-छेवला) फूलोंको बालकके पेडू पर लेप कर दे। जहां तक होसके बालकोंको जल्दी पचनेवाला ताजा भोजन देना चाहिए। जिससे ये निरोग रहे। यदि कोई रोगभी हो जाय तो धीरता पूर्वक आपही व किसी अच्छे वैद्य द्वारा दवाई करे। क्योंकि मूर्खता वश अधीर होने और धूर्त ढोंगियोंके मंत्र जन्त्रोंमें पडनेसे हानिके सिवा कुछ भी लाभ नहीं है। इस लिए प्रत्येक बातकी वास्तविकता जाननेके लिए सदैव अच्छी अच्छी पुस्तकें पढती रहनी चाहिए। इससे सांसारिक सुखोंके सिवाय पारमार्थिक सुखोंकी भी प्राप्ति होती है। यहां प्रसंगवश यह बातभी कह देना योग्य है कि कोई स्त्रियां बिना आगा पीछा सोचे ही दो-दो

चार-चार वर्षकी अवधितक व्रत आदि करनेकी प्रतिज्ञा कर लेती हैं। ऐसी ही अवस्थामें यदि गर्भ रह जाता है तो गर्भको इन व्रत उपवासोंसे बड़ा ही कष्ट होता है। बेचारी बडे धर्म-संकटमें पड जाती हैं--प्रतिज्ञा भी तोड़ नहीं सकतीं और गर्भका कष्ट भी देख नहीं सकतीं। उत्साहके वशवर्ती हो इसमें कोई प्रतिज्ञा नहीं करनी चाहिए। द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, संहनन व शक्ति देखकर ही कोई प्रतिज्ञा करो। कुछ मेरा यह कहना नहीं है कि व्रत उपवास करो ही मत। नहीं, करो; पर भले प्रकार आगा पीछा सोचकर।



तृतीय प्रकरण

स्त्रियोंकी नित्यचर्य्या

दोहा–गृही श्राविकाकी क्रिया, चहिए यत्नाचार।
ताकौ वर्णन करत कछु, निरखि श्रावकाचार॥
जल छानन, तजि निशि-असन, श्रावक चिन्ह जु तीन।
प्रति दिन दर्शन जो करे सो जैनी परवीन॥

स्त्रियोंको उचित है कि सूर्योदयके पूर्व शय्यासे उठ, पंच परमेष्ठीका स्मरण करें। बिस्तरोंको संभाल यथास्थान रख मलमूत्र आदि बाधाओंसे निश्चिन्त होवें। अनेक आलसी स्त्रियां दिन चढे उठतीं, और बिस्तरोंको ज्योंके त्यों छोड़कर और और काम धंधोंमें लग जाती हैं। यह बड़ी अज्ञानता है। स्त्रियोंको पतिसे पीछे सोना और उससे पहिले उठना चाहिए। गांवके बाहर दीर्घशंकाको जाना आरोग्यप्रद और अहिंसाका कार्य है। दीर्घशंकाको कपडे बदल कर जाना चाहिए। क्योंकि अपवित्र हाथों व अपवित्र स्थानके स्पर्श हो जानेका भय रहता है। शौचादिकका पानी छना हुआ होना चाहिए। जो बर्तन शौच करनेका हो उसे अन्य कामोंमें, प्रयोगमें न लावें। शौचके निमित्त जितना

पानी आवश्यक हो उतना ही लेना चाहिए । बहुतसे लोग जलकाय-जीवोंकी हिंसाके ख्यालसे पानी थोड़ा लेते हैं; कि, जिससे अपवित्रता ज्योंकी त्यों बनी रहती है । ध्यान रखनेकी बात है कि, गृहस्थके लिए स्थावर कायकी हिंसाका सर्वथा त्याग करना अशक्य है । परन्तु इसका मतलब कुछ यह नहीं है कि, व्यर्थ ही स्थावर कायिक जीवोंकी हिंसा की जाय। शौचके अन्तमें अधोस्थानको जलके सिवाय प्राशुक और शुद्ध मिट्टी अथवा भस्मसे धोकर शुद्ध करना भी अच्छा है। इसी प्रकार लघुशंकाके पीछे इन्द्री व हाथ-पाव धोना आवश्यक है।

शौचिक-क्रियासे निपट कर घरको कोमल बुहारीसे बुहारना चाहिए। जितने भी जीव बुहारने पर निकले एक सुरक्षित स्थानमें रख दिए जायें। खजूरकी कांटेदार बुहारी छोटे छोटे जीवोंका बहुत ही संहार करती है, यातो उससे बुहारा ही न जावे, और जो बुहारा भी जावे, तो उसकी एक एक पत्तीको फाडकर चार चार छः छः भाग कर दिए जावें जिससे बुहारी कोमल हो जावे । उरई अथवा अम्बाड़ीकी बुहारी वडी ही भली होती है। पश्चात् और भी जो ऐसे काम हो उन्हें दया धर्मका ख्याल करते हुए पूरे करके, छने हुए प्रामाणिक शुद्ध-जलसे स्नान करे । बहुतसे मनुष्य और स्त्रियां विषयसेवन, लघुशंका और दीर्घ

शंकाके पीछे स्नान और दन्तधावन नहीं करतीं यह कितनी मलिनताकी बात है। हां यह जरूर है, कि इन कामोंमें अनछने पानीका उपयोग न करना चाहिये। जल छाननेकी आज्ञा दूसरे धर्मोंमें भी पाई जाती है। *

इस प्रकार पवित्र हो अपनी योग्यतानुसार मोटा या पतला, महँगा या सस्ता, स्वदेशी कपडा जो कि शुद्ध और साफ हो, पहिनकर प्राशुक द्रव्य–लवंग, बादाम, चाँवल आदि–लेकर जिन मन्दिर जावे। जिस ग्राममें जिन मन्दिर नहीं उसमें जैनियोंको वास करना उचित नहीं। यदि यात्रा या देशाटनके समय दर्शन न मिलें तो अशुभका उदय विचार एकरस छोड़ भोजन करे। पर जो ग्राममें जिन मन्दिरके होते हुए दर्शन पूजन आदि नहीं करतीं वे अनुचित करती हैं। प्रत्येक व्यक्तिको भोजनोंके पहिले भगवानके दर्शन और आत्मचिन्तन करनेकी आवश्यकता है। मन्दिरको जाते समय कीड़ी, मकोड़ी, मल, मूत्र आदिको बचाता हुआ चले। जिससे जीवोंकी रक्षाके साथ साथ अपनी रक्षा और पवित्रता रहे। चमड़ेके जूते पहिन मंदिरको जाना बुरा है। अच्छा हो, यदि उस समय जूते पहिने ही न

* दृष्टिपूत न्यसेत्पाद, वस्त्रपूत पिबेज्जल।
सत्यपूत वदेद्वाक्य, मन पूत समाचरेत्॥
संवत्सरेण यत्पाप, कुरुते मत्स्यबधक।
एकाहेन तदाप्नोति, अपूतजलसंग्रही॥ (स्मृति)

जाएँ; और जो पहिने भी जाएँ तो कपड़ेके। मंदिरमें प्रवे करनेके पहिले जूतोंको (यदि पहिने हों) उतार, पैरोंक जलसे खूब धोना उचित है। फिर सब प्रकारकी उद्धतत और संकल्प विकल्प छोड़, जयजिनेन्द्र शब्द करती हु प्रतिमाजीके सन्मुख जावे और जयनिस्सहि, जयनिस्सहि, जयनिस्सहिका उच्चारण कर श्रीजीको तीन वार नमस्कार करे [जयनिस्सहि ३ के उच्चारणका कारण ऐसा बताया है कि, यदि कोई देव उस समय दर्शनको आया हो तो एक ओर हटजाए; तुम्हारा व उसका काम अविच्छिन्न रूपसे होता रहे-किसीको बाधा न हो।

श्रीजीके सम्मुख खड़ी हो, विचारे "मैं आत्म स्वरूपके बतानेवाले जिनेन्द्रका दर्शन कर रही हूं। इन्होंने किस प्रकार कष्ट सहन किये हैं! कैसे कैसे कर्मोंपर विजय पाई है! कब वह दिन आयगा जब मैं ठीक उसी मार्गपर चलने लगूँगी जिस पर जिनेन्द्र गए है। मै कैसे कैसे पाप कर रही हूं, भूल रही हूं, भटक रही हूं, पराएको अपना समझ रही हू, और स्वप्नको सच्चा मान रही हूं।

फिर कोई सुन्दर पद, जो तुम्हे तुम्हारी वास्तविकताकी ओर ले जाय, कहो। और भावोंकी निर्मलतासहित स्तोत्र पढ़तीं, मस्तक नवातीं, द्रव्य, क्षेत्र, काल भावके अनुसार एक द्रव्य या अष्ट-द्रव्यसे भगवानकी भक्तिपूर्वक पूजन

करो। फिर भगवानकी तीन प्रदक्षिणा* (भगवानकी दहिनी ओरसे प्रदक्षिणा की जाती है) देवे। प्रदक्षिणा देते हुए प्रत्येक दिशामें तीन आवर्त और एक शिरोनति करे और पश्चात् यह पाठ पढे।

श्लोकः—दर्शन देव देवस्य, दर्शन पाप नाशनम्।
दर्शन स्वर्गसोपान, दर्शन मोक्षसाधनम्॥ १॥

अर्थ—देवोंके देवका दर्शन पापोंका नाश करनेवाला, स्वर्गकी सीढ़ी और मोक्षका साधन है।

दर्शनेन जिनेन्द्राणा, साधूना वन्दनेन च।
न चिर तिष्ठते पाप, छिद्रहस्ते यथोदकम्॥ २॥

अर्थ—श्री जिनेन्द्रके दर्शन करनेसे और साधुओंकी वन्दना करनेसे पाप बहुत दिनोंतक नहीं ठहरते। जैसे छिद्रवाले हाथमे पानी नहीं ठहरता।

वीतरागमुख दृष्ट्वा, पद्मरागसमप्रभम्।
नैकजन्म कृत पाप, दर्शनेन विनश्यति॥ ३॥

पद्मरागके समान शोभित श्री वीतराग भगवानका मुख देखकर अनेक जन्मोंके किये हुए पाप नाश हो जाते हैं।

---

* प्रदक्षिणा देते हुए हाथ जोडे रहना चाहिए।

१ जोडे हुए हाथ घुमानेको आवर्त कहते हैं। २ जोडे हुए हाथोंपर मस्तक झुका कर रखनेको शिरोनति कहते हैं।

दर्शन जिनसूर्यस्य ससारध्वान्तनाशनम् ।
वोधन चित्तपद्मस्य समस्तार्थप्रकाशनम् ॥ ४ ॥

सूर्यके समान श्री जिनेन्द्रके दर्शनसे सांसारिक अंधकार नाश होता है । चित्त रूपी कमल फूलता है और सर्व पदार्थ प्रकाशमें आते है अर्थात् ज्ञात होते है ।

दर्शन जिनचद्रस्य सद्धर्म्मामृत वर्षणम् ।
जन्मदाहविनाशाय, वर्धन सुखवारिधे' ॥ ५ ॥

चंन्द्रमाके समान श्री जिनेन्द्र देवका दर्शन करनेसे सत्य-धर्म्मामृतकी वर्षा होती है । जन्म जन्मकी दाह ठंडी होती और सुख समुद्रकी वृद्धि होती है ।

जीवादितत्वप्रतिपादकाय सम्यक्त्वमुख्याष्टगुणार्णवाय ।
प्रशातरूपाय दिगम्वराय, देवाधिदेवाय नमो जिनाय ॥ ६ ॥

जो जीवादि सात तत्त्वोंको वतानेवाले सम्यक्त्व आदि आठ गुणोंके समुद्र, शान्त तथा दिगम्बर रूप हैं; उन देवाधिदेव श्री जिनेन्द्र भगवानको नमस्कार हो ।

चिदानंदैकरूपाय, जिनाय परमात्मने ।
परमात्मप्रकाशाय, नित्य सिद्धात्मने नम ॥ ७ ॥

जो ज्ञानानंदरूप है; अष्ट कर्मोंको जीतनेवाले हैं; परमात्मस्वरूप हैं; तथा परमतत्व परमात्माके प्रकाश करनेवाले हैं उन सिद्धात्माको नित्य नमस्कार हो ।

अन्यथा शरण नास्ति, त्वमेव शरण मम ।
तस्मात् कारुण्यभावेन, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ८ ॥

हे जिनेश्वर आपही मुझे शरणमें रखनेवाले हो और कोई शरणमें रखने योग्य नहीं है। इसलिये करुणा करके आप (संसारके पतनसे) रक्षा कीजिए–।

नहि त्राता नहि त्राता, नहि त्राता जगत्रये।
वीतरागात्परो देवो, न भूतो न भविष्यति ॥ ९ ॥

तीन लोकमें अपना कोई रक्षक नहीं है!, रक्षक नहीं है!! रक्षक नहीं है!!! यदि कोई है, तो हे वीतराग देव आपही हैं। क्यों कि आपके समान न तो कोई देव आजतक हुआ और न होगा।

जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने।
सदा मेऽस्तु सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु भवेभवे ॥ १०

मैं यह आकांक्षा करता हू कि जिनेन्द्र भगवानमें मेरी भक्ति दिन दिन होती जावे और प्रत्येक भवमें सदा बनी रहे।

जिनधर्मविनिर्मुक्तो, मा भवेच्चक्रवर्त्यपि।
स्याच्चेटोपि दरिद्रोपि, जिनधर्म्मानुवासित ॥ ११ ॥

जिन धर्म रहित चक्रवर्ती भी अच्छा नहीं। जिन धर्मका धारी होकर पराया दास तथा दरिद्री होना ही अच्छा है।

जन्म जन्म कृत पाप, जन्मकोटिमुपार्जित।
जन्ममृत्युजरातङ्क, हन्यते जिनदर्शनात् ॥ १२ ॥

—पर हाय–! कृत कृत्य-हुए–आवागमनसे-छूटे हुए–जिनेन्द्रभगवान–प्रार्थीकी–
–यह प्रार्थना पूरी करनेके नहीं। — — — —संशोधक।

जिनेन्द्रके दर्शनसे करोड़ों जन्मके किए हुए पाप तथा जन्म जरा मृत्युरूपी तीव्र रोग अवश्य ही नष्ट हो जाते हैं।

इस प्रकार मन लगाकर दर्शन पाठ पढ़े। फिर एक तरफ, जहांसे भगवानकी मुद्रा अच्छी तरह दीखे, खड़े होकर स्थिर चित्त हो पंचकल्याणक, तथा ध्यान मुद्राका वार वार स्मरण करे और भक्तिभावसे भगवानके गुणगावे "कि हे त्रैलोक्यनाथ! हे सर्वज्ञ वीतराग! हे देवाधिदेव! हे अनन्तचतुष्टय मंडित्त अर्हत भगवान! तुम्हारी जय हो। धन्य है तुम्हारी ध्यानमग्न मुद्रा और धन्य है तुम्हारा पवित्र नाम। तुम तरण तारण, अधम उधारण हो। संसार-समुद्रके पार करने वाले हो। तुम्हें मेरा नमस्कार हो। इंद्र इत्यादिसे सेव्य तुम्हारे गुण भला कौन कह सकता है।

इतना कहनेके पीछे यह या ऐसी ही कोई दूसरी स्तुति पढे:—

स्तुति—

प्रभु पतित पावन हौ अपावन, चरण आयो शरणजी।
यो विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन मरण जी॥ १॥
तुम ना पिछान्यो अन्य मान्यो, देव विविध प्रकार जी।
या बुद्धि सेती निज न जान्यो, भ्रम गिन्यो हितकार जी॥ २॥
भव विकट वनमें कर्म बैरी, ज्ञान धन मेरे हर्यो।
तब इष्ट भूलो भ्रष्ट हूवो, नष्ट गति धरतो फिर्यो॥ ३॥

धनि घड़ी अरु धनि दिवस यो ही, धनि जनम मेरो भयो।
अब भाग मेरो उदय आयो दरश प्रभुको लख लयो ॥ ४ ॥
छवि वीतरागी नग्नमुद्रा, दृष्टि नासा पै धरें।
वसु प्रातिहार्य अनन्त गुणयुत, कोटि रवि-द्युतिको हरे ॥ ५॥
अब मिटो तिमिर मिथ्यात मेरो, उदय रवि आतम भयो।
मो हर्ष उर ऐसो भयो मनु रक चिन्तामणि लयो ॥ ६ ॥
मैं हाथ जोडि नवाय मस्तक, वीनऊ तुम चरण जी।
परमोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनहु तारन तरन जी ॥ ७ ॥
जांचू नहीं सुरवास परि नरराज पुनिजन साथ जी।
बुध जाँचहु तुम भक्ति भव भव, दीजिए शिवनाथजी ॥ ८ ॥

इस भांति स्तुतिकर तीन आवर्त, एक शिरोनति और अष्टांग नमस्कार पूर्वक दण्डवत करे। फिर नीचेका श्लोक बोलते हुए गधोदक-चरणोदक-हृदय, नेत्र और मस्तकमे लगावे।

श्लोक—निर्मलं निर्मलीकरण पवित्र पापनाशन।
जिनचरणोदक वन्दे, अष्टकर्म विनाशक ॥
सोरठा—जिन तन परम पवित्त परसभई जगशुचि करन।
सो धारा मम नित्त, पाप हरौ पावन करौ ॥

गधोदक लगा अपना सौभाग्य समझे। परन्तु लेते समय इस बातका ध्यान रखे कि गंधोदक एक या दो अंगुलियोंसे ही लिया जाय, जिससे वह जमीन पर न गिरने पावे। और अशुद्ध हाथसे न लिया जाय। गन्धोदकके पास

जलका एक कटोरा अवश्य रक्खा जाय, जिससे गंधोदक लेनेके बाद अँगुलियाँ धो ली जायँ । इतना कार्य्य कर लेनेके पीछे अवकाशके अनुसार एकाग्रचित्त करके जाप्य, सामायिक और स्वाध्याय आदि करे । स्वाध्याय धर्मका मूल और शान्ति देनेवाला है । ध्यानमें जो आनन्द है वह किसी भी सांसारिक वासना या पदार्थमें नहीं है । शास्त्रों-पुस्तकोंके विषयमे एक लेखकने लिखा है वे (शास्त्र) हमें विना कुछ वेतन लिये पढाते हैं । विना क्रोध किये और भूलों पर विना दंड दिये हमे सिखाते है । रात दिन जब चाहे तब हमें पढ़ानेको तैयार रहते है । हमारी मूर्खतापर वे न तो हँसते है और न चार जनोंमें हमारी दिल्लगी उडाते है । फिर भला वताओ, शास्त्रों जैसे गुरु और पुस्तकालयों जैसे स्कूल क्या और होंगे ? जो मनुष्य धर्मको जानना चाहें; वे निर्दोप और सर्वज्ञ वीतराग कथित धर्मका अवलोकन करें । स्वाध्याय सब तपोंका मूल एक श्रेष्ठ सत्कर्म है ।

मंदिरमें विकथा-घरसम्बन्धी चर्चा, लेन देन, हँसी, झगडा आदि-नहीं करना चाहिए क्योंकि धर्म स्थानोंमें ऐसा करनेसे विशेप पाप बध होता है ।

श्रावकाचार आदि आचारग्रंथोंमें जहाँ तहाँ ८४ आच्छादनोंका वर्णन किया गया है । धर्मायतनमें जाकर

उनका लगाना उचित नहीं है। मंदिरमें सबसे मैत्रीभाव रक्खे। अपने दुर्भावोंसे उस काल बिलकुल छुट्टीपा जावे। + बालबच्चोंको शुद्ध-मलमूत्रादिसे निश्चिन्त-कराके ले जावे। और मंदिरमें भी इस बातका ख्याल रक्खे कि बच्चे किसी प्रकार की अपवित्रता या दूसरोंके धर्म-साधनमें कोई विघ्न न करने पावें।

धर्म साधनसे निपटकर स्त्रीको गृहस्थीके कामोंमें लगना चाहिये क्यों कि पुरुषके लिये धर्म साधन और आजीविका ये दो मुख्य कार्य्य हैं*। और स्त्रीके लिये धर्मसाधन गृहव्यवस्था और सन्तानपालन मुख्य कर्म हैं।

स्त्रियोंको रसोई शुद्ध बनानी चाहिये। रसोई बनाते समय नीचे लिखी बातोंपर ध्यान देना चाहिए।

चौकेकी क्रिया-पवित्र भोजन होनेसे मन और बुद्धि पवित्र होती है तथा अच्छे कार्य्योंकी ओर लगती है उन्हीं के हृदयमें धर्म ठहरता है जो मन, वचन और तनसे धर्माचरण करते है। धर्माचरणोंके लिये आवश्यक है कि हम अपना खान पान शुद्ध रक्खें-चौके चूल्हे पर खूब

+ क्योंकि ५ वर्षके हो जानेपर मंदिरमे ले जाकर भगवानको नमस्कार करावे। छोटा दर्शन और णमोकार मंत्र सिखावे। अजान अवस्थामें-बहुत छुटपनमें लेजाना ठीक नहीं है।

* कला बहत्तर मनुजकी तिनमें दो सरदार।
एक जीव आजीविका, एक जीव उद्धार॥ (कोई नीतिकार)
—संशोधक।

ध्यान दें। जल, रसोईकी वर्तनादि सामग्री, ईंधन और रसोईका स्थान इन चारों पर ध्यान देना 'चौका' कहलाता है।

जल—कुआँ, तालाब, नदी आदि पवित्र जलस्थानोंसे भली भांति छानकर लाया जावे, छाननेका वस्त्र उज्वल, गाढ़ा ३६ × २४ अंगुल हो। इस छन्नेको दुहरा करके छानना चाहिए। यदि वर्तनोंका मुँह वडा हो, तो उसी परिमाणसे छन्नेको भी वडा रखना चाहिए। (प्रत्येक अवस्थामें दुहरा करने परभी छन्ना वर्तनके मुंहसे तीन गुना हो) सदा पवित्र और मँजे हुए वर्तनोंमें धीरेधीरे पानी छाना जावे। अनछने पानीकी एक बूंद भी व्यर्थ न गिरे और छने हुए जलमें भी वह न मिलने पावे। अपने हाथसे पानी भरकर लाना सर्वोत्तम है। यदि ऐसा न हो सके तो मदिरा, मासके त्यागी किसी उच्चकुलके विश्वस्त व्यक्तिसे भराना उचित है। पानी छाननेके बाद जीवानी–बिलछानी–उस जलस्थानमें ही यत्न पूर्वक क्षेपण करना कराना चाहिये, जिसमेंसे कि पानी लाया गया हो। यदि पानी कुएँसे लाया गया हो तो जीवानी कडीदार लोटेसे डाली जाय, जिससे वह बीचहीमें न रहकर पानीतक पहुँच जाय। जो लोग जीवानी को यत्नपूर्वक उसी जलस्थानमें क्षेपण नहीं करते, जिसमेंसे कि जल भरा हो तो इससे जल छाननेका उद्देश्य अधूरा ही रह जाता है–उन जल जीवोंकी रक्षा नहीं होती।

छने हुए जलमें लौंग, हरडें और लकडीकी राख आदि द्रव्य शास्त्रोक्त प्रमाणसे डाल देने पर उसके रस, गंध, वर्ण और स्पर्श आदि बदल जाते है, तथा जल कायके जीव चय जाते हैं, और त्रसकी उत्पत्ति नहीं होती। इस भांति शुद्ध (प्रासुक) हुए जलकी मर्यादा २ प्रहरकी है; साधारण गर्म जलकी ४ प्रहरकी, और उबाले हुए याने अधनके समान गर्म किये जलकी मर्यादा ८ प्रहरकी है। प्रासुक जल मर्य्यादाके भीतर ही उपयोगमें लाया जा सकता है। मर्य्यादाके पश्चात् वह किसी भी कामका नहीं रहता।

दुःखकी बात है कि जैनियोंमें जल छाननेकी विधिका आजकाल प्रायः लोपसा हो गया है पानी छाननेके लिए पतला, पुरानी धोवीका टुकड़ा, जाति बिरादरीके भयसे रखते है, जिसमेंसे छोटे वडे सभी जीव, बराबर निकलते जाते है। भला इस ढोंगसे क्या लाभ है ? अनछना पानी पीनेसे अदयाके दोपके सिवाय शरीरमें अनेक रोग भी घर कर लेते हैं, यही कारण है, कि संसारके सभी विद्वान क्या जैन और क्या अजैन, और क्या डाक्टर, वैद्य, हकीम, वैज्ञानिक आदि पानीको छानकर पीनेकी सम्मति देते हैं। हमारे भारतीय वैद्यक शास्त्र तो न जाने कबसे पानी छानकर पीनेकी आज्ञा देते चले आये हैं। लोकोक्ति है कि "जल तो पीजे छानके गुरुको कीजे जानके" यह उक्ति भी हमें छानके

ध्यान दें। जल, रसोईकी वर्तनादि सामग्री, ईंधन और रसोईका स्थान इन चारों पर ध्यान देना 'चौका' कहलाता है।

जल—कुआँ, तालाब, नदी आदि पवित्र जलस्थानोंसे भली भांति छानकर लाया जावे, छाननेका वस्त्र उज्वल, गाढ़ा ३६ × २४ अंगुल हो। इस छन्नेको दुहरा करके छानना चाहिए। यदि वर्तनोंका मुँह वडा हो, तो उसी परिमाणसे छन्नेको भी वडा रखना चाहिए। (प्रत्येक अवस्थामें दुहरा करने परभी छन्ना वर्तनके मुंहसे तीन गुना हो) सदा पवित्र और मँजे हुए वर्तनोंमें धीरेधीरे पानी छाना जावे। अनछने पानीकी एक बूंद भी व्यर्थ न गिरे और छने हुए जलमें भी वह न मिलने पावे। अपने हाथसे पानी भरकर लाना सर्वोत्तम है। यदि ऐसा न हो सके तो मदिरा, मासके त्यागी किसी उच्चकुलके विश्वस्त व्यक्तिसे भराना उचित है। पानी छाननेके वाद जीवानी–विलछानी–उस जलस्थानमें ही यत्न पूर्वक क्षेपण करना कराना चाहिये, जिसमेंसे कि पानी लाया गया हो। यदि पानी कुएँसे लाया गया हो तो जीवानी कडीदार लोटेसे डाली जाय, जिससे वह वीचहीमें न रहकर पानीतक पहुँच जाय। जो लोग जीवानी को यत्नपूर्वक उसी जलस्थानमें क्षेपण नहीं करते, जिसमेंसे कि जल भरा हो तो इससे जल छाननेका उद्देश्य अधूरा ही रह जाता है–उन जल जीवोंकी रक्षा नहीं होती।

से निकाल डालना चाहिए। कितने ही लोग अनाजको धोकर खाते है, यह बात भी बहुत अच्छी है, परन्तु छने हुए पानीसे ही धोना चाहिए। बहुतसी स्त्रिया दाल चांवल आदिको बहुत पहिलेसे बीन रखती है, और रसोईके समय तनिक भी नहीं शोधती। विचारतीं है कि शुधे शुधाए तो रखे है। पर यह उनकी बडी भूल है। उस समय भी जरूर शोधना चाहिए।

आटेकी मर्य्यादा शीतकालमें ७ दिन, गरमीमें ५ दिन और बरसातमें ३ दिनकी है। इसके पीछे जीवोंकी उत्पत्ति हो जाती है। प्रायः प्रत्येक सामान ताजा लाकर ढका रखना चाहिए। वर्षाकालमे प्रत्येक वस्तुको बडी सावधानीसे रखना चाहिए, क्योंकि इस ऋतुमें जीवोंकी उत्पत्ति बहुत अधिक होती है। शक्कर, घी आदि मिष्ट और चिक्कण पदार्थोंको तो सभी ऋतुओंमें सावधानीसे रखने की आवश्यकता होती है। क्योकि ऐसी वस्तुओंमें थोडीसी भी भूल होने पर या तो बाहरसे अनेकों जीव आजाते है; या स्वय इन वस्तुओंमें ही उत्पन्न हो जाते है। वर्षाऋतुमे जहांतक होसके भोजनकी बहुत थोड़ी सामग्री रक्खी जावे।

ग्रीष्मकालमें स्त्रिया बहुतसी (दस दस पांच पांच सीमी (सिमैयां–विया) तोडकर रखती है

जल पीनेकी ही पुष्टि दिखाती है। यूरोपियन जातियां यद्यपि अहिंसाका विचार नहीं रखतीं, तो भी स्वास्थ्यके विचारसे पानीको अनेक तरहसे साफ करके पीती है।

पानीके छाननेका काम स्त्रियोंकी थोडीसी सावधानीसे अच्छी तरहसे होता रहसकता है। सदैव घरमें दो तीन छन्ने रखना चाहिए। पुराने छन्नोंसे पानी बराबर छानते ही रहना ठीक नहीं। उन्हें अलग कर देना चाहिए। सबसे अच्छी बात तो यह है, कि जलस्थानसे ही पानी छानकर लाया जावे, और फिर जिस समय पीनेकी इच्छा हो छानकर पिया जाता रहे। शाम सुबह सब पानी छानकर एक चौडे बरतनमें जीवानी एकत्र करे। तथा यत्नाचार पूर्वक उसे जलस्थानमे पहुंचावे। स्मरण रहे, पानी उबालकर और पीछे ठंडा करके पीनेसे शरीरकी नीरोगता बढ़ती है। यही प्राशुक जल पीनेका लाभ है।

भोजनसामग्री—अन्न अवींध (बिना घुना) होना चाहिए। उसका साफ करना और पीसना उजेलेमे होना चाहिए। पीसते समय चक्कीको, कूटते समय ओखलीको और इसी भांति दूसरे दूसरे पदार्थोंको पीसने कूटनेके पहिले भली भांति देख लो, साफ करलो। उनमें कोई जीव न रह जाय। चक्की आदिसे आटा आदि निकाललेने पर भी उसमें आटे वगैरहका कुछ अंश लगाही रह जाता है उसे कोमल बुहारी-

से निकाल डालना चाहिए। कितने ही लोग अनाजको धोकर खाते है, यह बात भी बहुत अच्छी है; परन्तु छने हुए पानीसे ही धोना चाहिए। बहुतसी स्त्रिया दाल चांवल आदिको बहुत पहिलेसे बीन रखती है, और रसोईके समय तनिक भी नहीं शोधतीं। विचारतीं हैं कि शुधे शुधाए तो रखे है। पर यह उनकी बडी भूल है। उस समय भी जरूर शोधना चाहिए।

आटेकी मर्य्यादा शीतकालमें ७ दिन, गरमीमें ५ दिन और बरसातमें ३ दिनकी है। इसके पीछे जीवोंकी उत्पत्ति हो जाती है। प्रायः प्रत्येक सामान ताजा लाकर ढका रखना चाहिए। वर्षाकालमें प्रत्येक वस्तुको बडी सावधानीसे रखना चाहिए, क्योंकि इस ऋतुमें जीवोंकी उत्पत्ति बहुत अधिक होती है। शक्कर, घी आदि मिष्ट और चिकण पदार्थोंको तो सभी ऋतुओंमें सावधानीसे रखने की आवश्यकता होती है। क्योंकि ऐसी वस्तुओंमें थोडीसी भी भूल होने पर या तो बाहरसे अनेकों जीव आजाते हैं; या स्वयं इन वस्तुओंमें ही उत्पन्न हो जाते है। वर्षाऋतुमें जहांतक होसके भोजनकी बहुत थोडी सामग्री रक्खी जावे।

ग्रीष्मकालमें स्त्रिया बहुतसी (दस दस पांच पांच सेर) सीमी (सिमैया–विया) तोडकर रखती हैं बरसात लगते

ही उनमें इल्लियां लग जाती है। यही हाल मर्य्यादासे बाहरके पापड अथाने (अचार) बडियों आदिका है परन्तु लोग वही वर्षोंका आचार आदि बडे मजेमें खाते हैं। कभी उन्हें सावधानी पूर्वक देखने दिखानेकी चेष्टा भी नहीं करते। हलवाईके यहांकी मिठाई–बाजारू मिठाई–भी त्रसजीवोंका सत ही है। उनके यहां भला क्रियासे बनाने वाला और सावधानीसे रखने-वाला कौन बैठा है? ऐसे ही अनेक कारणोंसे तो जैन जातिमें अनेक मारक रोग फैल गए है। इन अभक्ष्योंको हमें शीघ्र ही छोड़ना चाहिए।

पुनः खानेके पदार्थोंमें आलू, रतालू शकरकंद पुष्प विदल आदि २२ अभक्ष्य * और पांच उदंबर याने बड़, पीपल, ऊमर, कठूमर, पाकर फल तथा ३ मकार याने मद्य, मांस और मधुको त्रस राशि समझ करके कभी भूल कर भी नहीं खाना चाहिए।

रसोई बनानेके पहिले सर्व भोज्य पदार्थ लेकर शोधे तथा ठीक अन्दाज करके फिर रसोई बनावे। प्रथम ही

---

* २२ अभक्ष्योंके नाम–१ धगन २ द्विदल (छांछ दही या कच्चे दूधके साथ दुफाड़िया (दिद्वल) अनाज खाना ३ बहुबीज फल ४ ओला ५ रात्रिभोजन ६ कन्दमूल ७ मांस ८ मधु ९ मदिरा १० मिट्टी ११ माखन १२ विष १३ अचार (अथाना) १४ पीपल फल १५ बड़फल १६ उदंबरफल १७ कठूमर फल १८ पाकर फल १९ अजान फल २० तुच्छ फल २१ तुषार (बर्फ) २२ चलित रस।

चौकेमें जल लेजाके रक्खे और उसे प्रासुक करले क्योंकि कच्चे जलकी मर्य्यादा ३/४ पौन घंटेकी है, और रसोईमें २ या ३ घंटेमें लगते हैं। सारांश यह कि, पानी प्राशुक किये बिना काम नहीं चल सकता। आटा गूनकर-माडकर-शुद्ध स्वच्छ गीले कपड़ेसे ढॉक दे। आटा गूनते समय हाथकी अगूठियां आदि उतार देना चाहिए। फिर अपनी योग्यतानुसार सरस स्वच्छ भोजन बनावे। रसोईको कभी बिना ढॅकी न रखे। क्योंकि या तो भाफसे अथवा वैसे ही कई कारणोंसे मरकर जीव रसोई में गिर जायॅगे। भोजन सदैव खूब देख भाल और पीस पीसके करना चाहिए। रात्रिमें भोजन बनाना खाना बुरा है। रात्रिभोजनके विरुद्ध मार्कण्डेयपुराणमें एक जगह लिखा है:—

अस्तगते दिवानाथे, तोयं रुधिरमुच्यते,
अन्न मांससमं प्रोक्तं मार्कंडेन महर्षिणा,
रक्तीभवति तोयानी अन्नानि पिशितानि च,
रात्रौ भोजनसक्तस्य ग्रासे तन्मांसभक्षण,

भावार्थ यह है कि, रात्रिभोजन मांसभक्षणके, और रात्रि-जलपान, रक्तपानके समान है।

रसोई तैयार करके किसी संयमी धर्मात्मा पुरपको (जो उस समय भाग्यसे प्राप्त हो जावे) भोजन करावे, यदि न होवे तो अपने ही घरके जेठे योग्य पुरुषको भोजन

ही उनमें इल्लिया लग जाती है। यही हाल मर्य्यादासे वाहरके पापड अथाने (अचार) वडियों आदिका है परन्तु लोग वही वर्षोंका आचार आदि वडे मजेमें खाते हैं। कभी उन्हें सावधानी पूर्वक देखने दिखानेकी चेष्टा भी नहीं करते। हलवाईके यहांकी मिठाई–बाजारू मिठाई–भी त्रसजीवोंका सत ही है। उनके यहां भला क्रियासे वनाने वाला और सावधानीसे रखने-वाला कौन वैठा है? ऐसे ही अनेक कारणोंसे तो जैन जातिमें अनेक मारक रोग फैल गए है। इन अभक्ष्योंको हमें शीघ्र ही छोड़ना चाहिए।

पुनः खानेके पदार्थोंमें आलू, रतालू शकरकंद पुष्प विदल आदि २२ अभक्ष्य * और पांच उदंवर याने बड़, पीपल, ऊमर, कठूमर, पाकर फल तथा ३ मकार याने मद्य, मांस और मधुको त्रस राशि समझ करके कभी भूल कर भी नहीं खाना चाहिए।

रसोई वनानेके पहिले सर्व भोज्य पदार्थ लेकर शोधे तथा ठीक अन्दाज करके फिर रसोई वनावे। प्रथम ही

---

* २२ अभक्ष्योंके नाम–१ वैंगन २ द्विदल (छाछ दही या कच्चे दूधके साथ दुफाडिया (दिद्दल) अनाज खाना ३ वहुबीज फल ४ ओला ५ रात्रिभोजन ६ कन्दमूल ७ मांस ८ मधु ९ मदिरा १० मिट्टी ११ माखन १२ विष १३ अचार (अथाना) १४ पीपल फल १५ वडफल १६ उदवरफल १७ कठूमर फल १८ पाकर फल १९ अजान फल २० तुच्छ फल २१ तुषार (वर्फ) २२ चलित रस।

पानीके बराबर, २ घडी की (३/४ पौन घंटेकी) है । प्राशुक (गर्म) किये हुए दूधमे जामन देनेसे बने हुए दहीकी मर्यादा ८ प्रहर की है । दही जमानेका सर्वोत्तम उपाय यह है कि, कल्दार रुपयेको सामान्य रीतिसे गर्म करके प्राशुक दूधमें डाल देनेसे ४ प्रहरके भीतर उमदा दही जम जाता है ।

इनके सिवाय अन्य पदार्थोंकी मर्य्यादा जाननेकी इच्छा हो तो, क्रियाकोपसे जानना चाहिए । स्मरण रखना चाहिए कि, मर्यादाके पश्चात् प्रत्येक पदार्थमें त्रस जीवोंकी उत्पत्ति हो जाती है । बिना औटाए हुए दहीं अथवा छांछके साथ, द्विदल (विदल) अन्न खानेसे अनेक दोष उत्पन्न होते है । बिगडे हुए स्वादवाले पदार्थ खानेसे स्वास्थ्य बिगड जाता है । इसीलिए हमारे आचार्योंने हमें ताजा और शुद्ध भोजन करनेकी आज्ञा दी है; जिससे कि हम मोटे-ताजे और नीरोग रहें तथा लौकिक और धार्मिक कार्योंको भलीभांति साधित कर सकें ।

बर्तन—पवित्र राखसे अच्छी तरह मँजे हुए हों । शूद्र, गाय, भैंस, कुत्ते या बिल्लीके छुए हुए न हो । पाखानेको लिये जानेवाले लोटेसे यदि अच्छे बर्तन छूजाएं या शूद्रादिने उनमेंसे खाया पिया हो, तो बर्तनोंको अग्निमें डालकर शुद्ध कर लेना चाहिए । हां, यह बात ठीक है कि यदि खाते पीते समय कुत्ता बिल्ली आदि आजाएँ, तो उन्हें

करावे और हर्ष माने। आजकलके समयमें तो अत्यंत दुखित भुखित और हीनांग दो एक व्यक्तियोंको भोजन कराना ही, बड़े कल्याणका कारण है। धन्य है वे व्यक्ति, जो प्रति दिन इसी प्रकार दूसरोंको भोजन कराके भोजन करते हैं। पुरुषोंके भोजनोपरान्त स्त्रियां भोजन करें। भोजनके पीछे ही वर्तन साफ कर डालना और चौका लगा डालना चाहिए जूठे वर्तन अधिक देरतक पड़े रहने-से उनमें त्रस जीवोंकी उत्पत्ति हो जाती है। भिनभिनाती हुई मक्खियां उस जूठे पानीमें (धोवनमें) गिरती-मरती हैं, जिससे हिंसाका दोष लगता है। अथवा अपवित्र कुत्ते, बिल्ली उन्हें चाटकर अपवित्र कर देते हैं।

लड्डू, बावर घेवर, बून्दी, खारी सेव आदि पकी रसोई की मर्यादा, जिनमें पानीका अंश थोडा होता है, ८ पहरकी है। पुआ, पुड़ी, भजिया आदिकी मर्यादा अधिक जल होनेके कारण ४ पहर की है। खाटा, कढी, खिचडी आदि कच्ची रसोईकी मर्य्यादा २ पहरकी है। जिस रसोई में पानी न पडा हो जैसे मगद आदिकी मर्य्यादा आटेके बराबर जानो। दूध दुहकर तत्काल छानके औंटा रखनेसे शुद्ध रहता है। इस दूधकी मर्यादा ८ पहरकी है गर्म पानी डालकर तैयार की हुई छॉछकी मर्यादा ४ पहरकी है। कच्चे पानीसे बनाये हुए मट्ठे (छॉछ) की मर्यादा कच्चे

पानीके बराबर, २ घडी की (३/४ पौन घंटेकी) है । माशुक (गर्म) किये हुए दूधमें जामन देनेसे बने हुए दहीकी मर्यादा ८ महर की है । दही जमानेका सर्वोत्तम उपाय यह है कि, कल्दार रुपयेको सामान्य रीतिसे गर्म करके माशुक दूधमें डाल देनेसे ४ महरके भीतर उमदा दही जम जाता है ।

इनके सिवाय अन्य पदार्थोंकी मर्य्यादा जाननेकी इच्छा हो तो, क्रियाकोषसे जानना चाहिए । स्मरण रखना चाहिए कि, मर्यादाके पश्चात् मत्येक पदार्थमें त्रस जीवोंकी उत्पत्ति हो जाती है । विना औटाए हुए दही अथवा छांछके साथ, द्विदल (विदल) अन्न खानेसे अनेक दोष उत्पन्न होते है । विगडे हुए स्वादवाले पदार्थ खानेसे स्वास्थ्य विगड जाता है । इसीलिए हमारे आचार्योंने हमें ताजा और शुद्ध भोजन करनेकी आज्ञा दी है, जिससे कि हम मोटे-ताजे और नीरोग रहें तथा लौकिक और धार्मिक कार्योंको भलीभाति साधित कर सकें ।

वर्तन—पवित्र राखसे अच्छी तरह मॅजे हुए हों । शूद्र, गाय, भैंस, कुत्ते या विल्लीके छुए हुए न हों । पाखानेको लिये जानेवाले लोटेसे यदि अच्छे वर्तन छूजाएँ या शूद्रादिने उनमेंसे खाया पिया हो, तो वर्तनोंको अग्निमें डालकर शुद्ध कर लेना चाहिए । हां, यह वात ठीक है कि यदि खाते पीते समय कुत्ता विल्ली आदि आजाएँ, तो उन्हें

करावे और हर्ष माने। आजकलके समयमें तो अत्यंत दुखित भुखित और हीनाग दो एक व्यक्तियोंको भोजन कराना ही, बड़े कल्याणका कारण है। धन्य है वे व्यक्ति, जो प्रति दिन इसी प्रकार दूसरोंको भोजन कराके भोजन करते हैं। पुरुषोंके भोजनोपरान्त स्त्रिया भोजन करें। भोजनके पीछे ही वर्तन साफ कर डालना और चौका लगा डालना चाहिए जूठे वर्तन अधिक देरतक पडे रहने-से उनमें त्रस जीवोंकी उत्पत्ति हो जाती है। भिनभिनाती हुई मक्खिया उस जूठे पानीमें (धोवनमें) गिरती–मरती हैं, जिससे हिंसाका दोप लगता है। अथवा अपवित्र कुत्ते, बिल्ली उन्हें चाटकर अपवित्र कर देते हैं।

लड्डू, बावर घेवर, बून्दी, खारी सेव आदि पकी रसोई की मर्यादा, जिनमें पानीका अंश थोडा होता है, ८ प्रहरकी है। पुआ, पुड़ी, भजिया आदिकी मर्यादा अधिक जल होनेके कारण ४ प्रहर की है। खाटा, कढी, खिचडी आदि कच्ची रसोईकी मर्य्यादा २ प्रहरकी है। जिस रसोई में पानी न पडा हो जैसे मगद आदिकी मर्य्यादा आटेके वगवर जानो। दूध दुहकर तत्काल छानके औंटा रखनेसे शुद्ध रहता है। इस दूधकी मर्यादा ८ प्रहरकी है गर्म पानी डालकर तैयार की हुई छॉछकी मर्यादा ४ प्रहरकी है। कच्चे पानीसे वनाये हुए मट्ठे (छॉछ) की मर्यादा कच्चे

जितनी पवित्रता रक्खी जायगी, परिणाम-भाव-उतने ही पवित्र होंगे और इससे शरीर और मन उतना ही पुष्ट तथा सुस्थ (अच्छा) रहेगा। अनेक घरोंमें चौका न लगाया जाकर पानी छिडक दिया जाता है, अनेक घरोंमें एक ओर रसोई बना करती है और दूसरी ओर राख आदि कूड़ा करकट लगा रहता है। यह बडा ही घृणास्पद म्लेच्छ व्यवहार है। ऐसा न करना चाहिए। चौका जिस कपडेसे लगाया जाय उसे नित्य ही निचोडकर सुखा डालना चाहिए। बहुतेरी स्त्रिया उसे वैसाका वैसा मिट्टी पानीमें भीगा रख देती हैं जिससे उसमें बहुतसे कीड़े पड जाते है। अगले दिन उसी कपडेसे (पोतेसे) फिर चौका लगा दिया जाता है, और वे जीव बेचारे परलोक सिधारते हैं।

गोबरसे चौका लगाना ठीक नहीं है, क्योंकि गोबरका चौका देरसे सूखता है। और दूसरे, उसमें कीड़े पड़नेकी संभावना रहती है। इस तरह यत्नाचारसे चौका लगा, स्नान कर, शुद्ध स्वच्छ वस्त्र पहिने। फिर रसोईका सामान शोध चौकेमेंसे रसोई बनावे। पुरुष भी हाथ पांव धो स्वच्छ वस्त्र पहिन भोजनके निमित्त चौकेमें जावें। यदि चौकेमें विना नहाये धोए और विना स्वच्छ कपडे पहिने चला गया जावे तो शूद्रों और हममें अन्तरही क्या रहे। स्वच्छता-पवित्रता-हर जगह अच्छी और लाभप्रद है। गृहस्थी यदि धनवान भी हो, तो भी कुटुम्बके भोजन

दया पूर्वक कुछ भोजन डाल देना चाहिए। वाजारू दुकानों पर वाजारू मिठाई खाना—जूते चढ़ाए भोजन या मिठाई पा जाना—कांच और चीनीके वर्तनोंमें जूठे इत्यादिका कोई दोष न समझना वडाही हानिकर है। कमसे कम अपनी आरोग्यता चाहनेवालोंको तो अवश्य ही इन वातोंसे वचना चाहिए।

चौका—रसोईका स्थान अर्थात् चौका ऐसे स्थानमें हो जहां कि कूकर, विल्ली आदि प्रवेश न कर सकें; और कीडी मकोडी न ठहर सकें, तथा जाला न बना सकें। जहांकी धरती सूखी हो, और हर ऋतुमें सूखी रह सके। जहां भली भांति प्रकाश आता हो। रसोईके स्थानकी जहां सीमा वँधी हो। ऊपर चंदोवा इस प्रकार वँधा हो, जिससे ऊपरसे जीव जन्तु और कूडा करकट न गिरने पावे। [चंदोवा, चक्की, उखली, घिनौंची (पनिंडा) आदि आदि स्थानों पर भी रखना आवश्यक है] चौकेको नित्य कोमल बुहारीसे बुहारके तथा देखभालके, चूल्हेकी राख निकालके, मिट्टी मिले माशुक जलसे पोतना उचित है। चौका रातको न लगाया जाय, क्योंकि उससे अनेक प्राणियोंका नाश होना संभव है। चौका आवश्य लगाना चाहिए। अर्थात् आशय यह कि, भोजनसामग्री, भोजनस्थान आदिमें

१ ऐसी बुहारियां वम्बईमें चार चार छ छ आनेको अच्छी मिल जाती हैं जोकि सुना जाता है कि टिकाऊ भी होती हैं। —संशोधक।

नहाने धोनेका पानी ऐसे स्थानमें डाला जाना चाहिए तथा पेशाव भी ऐसे स्थानमें की जानी चाहिए जहां जल्दी सूख जाय। क्योंकि किसी भी जगह वहुत गीलापन होनेसे कीडे उत्पन्न हो जाते, दुर्गन्धि फैलती तथा नाना प्रकारके रोग उत्पन्न होने लगते है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति इन पांच स्थावरोंकी रक्षाके लिए आवश्यकतासे अधिक इनका व्यर्थ उपयोग मत करो। ऐसा कि वेकाम पानी डाल दिया जाय; या व्यर्थ धरती खोदी जाय; अथवा यों ही इधर उधर आग जलाई जाय; झाड़, फूल, फल आदि तोड़े जायें, बिना किसी उपयोगके दिया जलाया जाय; ये अथवा इनही जैसे कृत्य अनर्थ-दंड-पापके मूल हैं। और गृहस्थका मुख्य धर्म यही है कि आवश्यकतानुकूल ही स्थावर काय काममें लावे। त्रस कायकी संकल्पी हिंसाको छोड़े; और भी हिंसा अर्थात् व्यापार-धंधे संबन्धी हिंसामें यत्नाचार पूर्वक काम करे। जो इससे विपरीत चलते हैं वे निस्सन्तान होते हैं, रोगी और दुखी होते हैं। हिंसाके कडुए फल भुगतते है। हमें धर्मनीति पर चलना चाहिए जिससे हिंसा टले, दयाधर्म पले, शरीर और कुटुम्बकी रक्षा हो तथा लौकिक और पारलौकिक सुखों-की प्राप्ति हो।

रसोई घरकी स्त्रियोंसे ही बनवानी चाहिए । क्योंकि रसोई बनानेवालेके चित्तमें प्रेम व भक्तिभाव होना चाहिये जो नौकरोंमें होना संभव नहीं है । स्वयं रसोई बनाई जाय तभी चौकेकी शुद्धता रह सकती है। रसोई बनाना स्त्रियोंका एक व्यायाम भी है ।

ईंधन—अवींध और निर्जन्तु सूखी लकड़ीका हो। कोमल बुहारी या कपड़ेसे यदि वह एक बार साफ कर लिया जावे –पोंछ लिया जावे-तो अहिंसा धर्मकी अत्यधिक पालना हो । खास करके बरसातमें, ईंधनमें असंख्य जीव हो जाते हैं, इसलिये बरसातमें तो बहुतही सावधानी करके ईंधन जलाना चाहिए। अच्छा हो यदि कोयला ही जलाया जावे, उसीसे रसोई बनाई जावे । गोबरके कंडे (छैने) जलाना तो जैनियोंको सर्वथा अनुचित हैं। क्योंकि इनके बनानेमें ही हजारों कीड़ोंका सत्यानाश हो जाता है।

इसी तरह गृहस्थीके अन्य अन्य कार्य भी बहुत विचार पूर्वक करना चाहिये। सिर साफ करनेके पीछे जो जूं आदि निकलतीं है, उन्हें मारना न चाहिये, किन्तु, बाहर किसी घनी छायावाले स्थानमें सावधानी पूर्वक रख देना चाहिये। ऐसा ही व्यवहार अन्नमें निकले हुए जन्तुओंके साथ करना चाहिये। उन्हें भी कुछ अन्नके साथ किसी पात्रमें रखके छायायुक्त स्थानमें रख दे ।

नहाने धोनेका पानी ऐसे स्थानमें डाला जाना चाहिए तथा पेशाब भी ऐसे स्थानमें की जानी चाहिए जहां जल्दी सूख जाय। क्योंकि किसी भी जगह बहुत गीलापन होनेसे कीड़े उत्पन्न हो जाते, दुर्गन्धि फैलती तथा नाना प्रकारके रोग उत्पन्न होने लगते है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति इन पांच स्थावरोंकी रक्षाके लिए आवश्यकतासे अधिक इनका व्यर्थ उपयोग मत करो। ऐसा कि बेकाम पानी डाल दिया जाय; या व्यर्थ धरती खोदी जाय; अथवा यों ही इधर उधर आग जलाई जाय; झाड़, फूल, फल आदि तोड़े जायँ, बिना किसी उपयोगके दिया जलाया जाय; ये अथवा इनही जैसे कृत्य अनर्थ-दंड-पापके मूल हैं। और गृहस्थका मुख्य धर्म यही है कि आवश्यकतानुकूल ही स्थावर काय काममें लावे। त्रस कायकी संकल्पी हिंसाको छोड़े; और भी हिंसा अर्थात् व्यापार-धधे सबन्धी हिंसामें यत्नाचार पूर्वक काम करे। जो इससे विपरीत चलते है वे निस्सन्तान होते है, रोगी और दुखी होते हैं। हिंसाके कडुए फल भुगतते है। हमें धर्मनीति पर चलना चाहिए जिससे हिंसा टले, दयाधर्म पले, शरीर और कुटुम्बकी रक्षा हो तथा लौकिक और पारलौकिक सुखों-की प्राप्ति हो।

चतुर्थ प्रकरण

ऋतुक्रिया-विचार

जो नारी ऋतुक्रियामें, वरते सविधि सयान।
ताके वर सन्तान है, सुख-यश-बुद्धि निधान॥

स्त्रियोंके उदरमें एक डिंब-कोप रहता है, जिसकी चर्म-स्थलीके रक्तसे प्रतिमास अंडेके समान एक छोटा पदार्थ उत्पन्न होता है। क्रमानुसार महीना पूर्ण होने पर यह अंडा फटकर गर्भस्थलीके ऊपर नाभिसे जा मिलता है; और रक्तादि, मूत्र-मार्ग द्वारा बाहर निकल आता है। इस प्रकार किसीके दो तीन दिन और किसीके पांच सात दिनतक निकलता रहता है, ऐसी क्रिया युक्त स्त्रीको पुष्पवती या रजस्वला कहते हैं। मासिक धर्म होनेका नियम ३ दिनका है इससे कम या अधिक, रोगके कारण होता है। इन दिनोंमें स्त्री अस्पर्श्य कही गई है। इन दिनों उसे ग्रहस्थीके प्रत्येक कार्यसे अलग रहना चाहिये। किसी भी वस्तु और बाल बच्चेको न छुए। एकान्तमें एक जगह बैठे। कितने अफसोसकी बात है कि आजकल रजस्वला स्त्रियां पानी भरना, पीसना, वर्तन मलना आदि अनेक काम करती है। पर यह वैद्यक शास्त्रके विरुद्ध है। वैद्यकशास्त्र बतलाता

है कि मासिक धर्मके समय स्त्रीको सुस्थ और शांत भावसे रहना चाहिये, किसीका भी मुँह नहीं देखना चाहिए क्योंकि विचारों, घटनाओं और दृश्योंका प्रभाव आगे होनेवाली सन्तान पर अभीसे पड़ चकता है। पापियोंकी छाया पड़ जाने, अथवा चित्त चलायमान होजानेसे भावी सन्तान पर बहुत बुरा असर पड़ता है। इसी सम्बधमें एक मनोहर कहानी नीचे लिखी जाती है।

एक ग्राममें ४ अंधे रहते थे। वे चारों ही गुणवान और आपसमें मित्र थे। उनने विचारा कि 'गांवका जोगी अन्य गांवका सिद्ध' हो न हो, चलो अपन चारो, कहीं बाहर चले, जिसमें आजीविका चले और गुण विख्यात हो। उनमेंसे पहिला रत्नपरीक्षक, दूसरा अश्वपरीक्षक, तीसरा स्त्री परीक्षक, और चौथा पुरुष परीक्षक था। उन चारोंने चल दिया और एक बडी राजधानीमें पहुँचे। वहांके राजासे मिल कर आजीविका-प्राप्तिकी प्रार्थना की। राजाने पूछा कि परदेशी सूरदासो! तुममेंसे प्रत्येकमें क्या क्या गुण हैं सो बताओ। प्रत्येकके अपना अपना गुण निवेदन करने पर राजाने उनमेंसे प्रत्येकको १ सेर आटा, १ छटाक दाल, १ तोला घी और १ तोला नमक प्रति दिन दिए जानेकी आज्ञा दे दी। चारों सूरदास खाते पीते आनन्द करते, वहीं राजधानीमें रहने लगे।

संयोगसे एक दिन एक जौहरी बहुतसे जवाहिर लेकर राजधानीमें आया। तब राजाने रत्नोंकी परीक्षा करानेके लिए, उस रत्नपरीक्षक सूरदासको बुलाकर कुछ अच्छे रत्न ले देनेको कहा। उस सूरदासने कुछ चोखे-उत्तम-रत्न ढूंढ कर राजाको दिये और कहा कि ये चोखे हैं। यदि ये खोटे होंगे तो इन्हें घनकी चोट दिलवाकर देख लीजिये, फूट जायँगे। असली–पक्के–रत्न होंगे तो कभी भी फूटनेके नहीं। सूरदासके कहे अनुसार रत्नोंकी परीक्षा की गई और वे चोखे-पक्के-रत्न सिद्ध हुए। तब राजाने उस रत्नपरीक्षक सूरदासको बहुतसा पुरस्कार दिया और घीकी मात्रा बढवा दी।

इसी प्रकार एक बार एक अच्छा पुष्ट और सुन्दर घोड़ा, राजाने अश्व परीक्षक सूरदासको सौंपा और परीक्षा करनेको कहा। सूरदासने घोडेके अंगोपाङ्ग टटोल कर कहा, राजन! इस सब सुलक्षणोंवाले घोडेमें, एक यह कुलक्षण है कि, जलमें प्रवेश करते ही यह बैठ जायगा। राजाने परीक्षाकी। सचमुच जलमें धँसते ही घोडा बैठ गया। परीक्षा कर चुकने पर राजाने सूरदाससे पूछा कि तुमने घोडेका यह दोष कैसे जान लिया? तब सूरदासने कहा कि, जिस तरह वैद्य नाडी टटोलकर रोग जान लेते हैं, उसी तरह इसके अंग और नाडियां टटोल कर मैंने इसका यह दोष जाना। बात यह है कि, इसके पेटमें मुझे एक ऐसी

नस मिली, जो अपने प्रमाणसे बहुत मोटी थी, और तब मैंने सोचते विचारते पता लगाया कि, इस घोडेकी माँने भैंसका दूध पिया है, जिसकी गर्मीका अंश इस घोडेके अंगमें भी है। राजाने पहिले सूरदासकी तरह इसे भी पुरस्कार आदि दिए।

एक दिन राजाने तीसरे स्त्रीपरीक्षक सूरदासको बुलाकर कहा कि, आज तुम महलोंमें जाकर मेरी रानीकी परीक्षा करो और बिलकुल सच सच हाल मुझसे आकर कहो। पश्चात् राजाने रानीको खबर करवाई कि, थोडी ही देरमें एक सूरदासजी तुम्हारे महलमें आनेवाले हैं, सो तुम सावधानीसे इनका आदर-सत्कार करना। रानीने खबर पाते ही अपना खूब शृंगार किया। और ऐसा शृंगार किया कि जिससे बढकर हो न सके। शृंगार करके शय्यापर बैठती ही जाती थी कि सूरदासजी आ पहुंचे। रानी हाथमें कुछ भेट ले खाँसती खँखारती हुई, जल्दी जल्दी धमधमाती द्वार तक पहुँची। सूरदास इन ऊपरी बातोंहीसे उसकी परीक्षा करके राजाके पास लौट गया और राजाके पूछने पर कहा—अपराध क्षमा हो, आपकी रानी किसी ओछे घर की बेटी जान पडती हैं यदि उनकी माता क्षत्राणी है तो परपुरुपरता है; जो पिता क्षत्रिय है, तो यह नीच माँ की बेटी हैं। सुनते ही राजाने सूरदासको तो

संयोगसे एक दिन एक जौहरी बहुतसे जवाहिर लेकर राजधानीमें आया। तब राजाने रत्नोंकी परीक्षा करानेके लिए, उस रत्नपरीक्षक सूरदासको बुलाकर कुछ अच्छे रत्न ले देनेको कहा। उस सूरदासने कुछ चोखे-उत्तम-रत्न ढूंढ कर राजाको दिये और कहा कि ये चोखे है। यदि ये खोटे होंगे तो इन्हें घनकी चोट दिलवाकर देख लीजिये, फूट जायँगे। असली—पक्के—रत्न होंगे तो कभी भी फूटनेके नहीं। सूरदासके कहे अनुसार रत्नोंकी परीक्षा की गई और वे चोखे-पक्के-रत्न सिद्ध हुए। तब राजाने उस रत्नपरीक्षक सूरदासको बहुतसा पुरस्कार दिया और घीकी मात्रा बढवा दी।

इसी प्रकार एक वार एक अच्छा पुष्ट और सुन्दर घोडा, राजाने अश्व परीक्षक सूरदासको सौंपा और परीक्षा करनेको कहा। सूरदासने घोडेके अंगोपाङ्ग टटोल कर कहा, राजन! इस सब सुलक्षणोंवाले घोडेमें, एक यह कुलक्षण है कि, जलमें प्रवेश करते ही यह बैठ जायगा। राजाने परीक्षाकी। सचमुच जलमें धँसते ही घोडा बैठ गया। परीक्षा कर चुकने पर राजाने सूरदाससे पूछा कि तुमने घोडेका यह दोष कैसे जान लिया? तब सूरदासने कहा कि, जिस तरह वैद्य नाडी टटोलकर रोग जान लेते हैं, उसी तरह इसके अंग और नाडियां टटोल कर मैंने इसका यह दोष जाना। बात यह है कि, इसके पेटमें मुझे एक ऐसी

नस मिली, जो अपने प्रमाणसे बहुत मोटी थी, और तब मैंने सोचते विचारते पता लगाया कि, इस घोडेकी माँने भैंसका दूध पिया है, जिसकी गर्मीका अंश इस घोडेके अंगमें भी है । राजाने पहिले सूरदासकी तरह इसे भी पुरस्कार आदि दिए।

एक दिन राजाने तीसरे स्त्रीपरीक्षक सूरदासको बुलाकर कहा कि, आज तुम महलोंमें जाकर मेरी रानीकी परीक्षा करो और बिलकुल सच सच हाल मुझसे आकर कहो । पश्चात् राजाने रानीको खबर करवाई कि, थोडी ही देरमें एक सूरदासजी तुम्हारे महलमें आनेवाले हैं, सो तुम सावधानीसे इनका आदर-सत्कार करना । रानीने खबर पाते ही अपना खूब शृंगार किया । और ऐसा शृंगार किया कि जिससे बढकर हो न सके। शृंगार करके शय्यापर बैठती ही जाती थी कि सूरदासजी आ पहुंचे । रानी हाथमें कुछ भेट ले खाँसती खँखारती हुई, जल्दी जल्दी धमधमाती द्वार तक पहुँची । सूरदास इन ऊपरी बातोंहीसे उसकी परीक्षा करके राजाके पास लौट गया और राजाके पूछने पर कहा—अपराध क्षमा हो, आपकी रानी किसी ओछे घर की बेटी जान पड़ती हैं यदि उनकी माता क्षत्राणी है तो परपुरुपरता है; जो पिता क्षत्रिय है, तो यह किसी नीच माँ की बेटी हैं। सुनते ही राजाने सूरदासको तो घर

जानेकी आज्ञा दी और आप शीघ्र ही रानीके पास पहुंचे। बड़ी खिन्नतासे बैठे। रानीने पूछा, महाराज! उदास कैसे? राजाने कहा, मैं जो वात पूछता हूं उसे विलकुल सच सच बताना, कुछ छुपाना मत। किसी भांतिका डर मत खाना। क्योंकि उसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है। पूछना यह है कि, तुम किसकी पुत्री हो? अपने माता पिताका वास्तविक परिचय दो। रानीने राजाके चरणों पर गिरके कहा, महाराज! मैं बाँदीकी कूंखसे हूं। चाहे मारिये, चाहे पालिये। आपके साथ ब्याह होनेका कारण यह है कि, जिस कन्यासे आपकी मँगनी हुई थी, वह ठीक विवाहके समय मर गई। तब इस मृत्युकी वातको छिपाकर मेरे साथ आपकी शादी कर दी गई। राजाने सुना, और दरवारमें आया। सूरदासको बुलाकर पूछा कि सूरदास तुमने कैसे जाना कि मेरी रानीके जाति-वंशमें कोई अन्तर है। सूरदास बोला— महाराज आदमीकी योग्यता—हैसियत—दो वातोंसे जानी जाती है। एक तो बोलनेसे, और दूसरे शरीरकी क्रियासे अर्थात् चलने, फिरने, उठने और बैठनेसे तथा वस्त्राभूषण आदि ठाटबाटसे। सो ही किसी कविने कहा है कि "भले बुरे सब एकसे, जौलों बोलत नाहिं" और "बडे बडाईना तजें, बड़ो न बोले बोल॥" मैंने भी रानीकी परीक्षा बोलने और चलने फिरनेसे की है। जो बडे घरकी बेटियां हैं; जिन्हें मायके (पीहर) और ससुरालकी शरम है; माता पिताकी

और सास ससुरकी प्रतिष्ठाका ध्यान है, तथा जो अपयश और पापोंसे डरती हैं; वे चलने फिरने बैठने उठने आदिमे मर्यादाका उल्लंघन नहीं करतीं है । छिछलापन-उथलापन-नीचताका द्योतक है ।

कुटिला स्त्रियोंके विषयमें कहा है:—

१—अपने पिताके वासमे, जँह तह फिरें मतिमन्द ज्यो,
डोलती घर घर फिरे, बिन हेतुही स्वच्छन्द त्यों,
२—जहँ होय मेला तथा कौतुक, देखनेको जावहीं,
पर पुरुष बैठे होय बहुते, होय तहँ ठाडी सही,
३—बहु भ्रमन पसद विदेश जाको, एकली जहँ तहँ फिरें,
व्यभिचारिणी जे नारि कुटिला, प्रीति तिन हूते करे,
४—नहिं लाज काहूकी करें, निज पति निरादर जासु के,
वे नारि कुलटा पापिनी ये जान लक्षण तासु के,
५—क्षण मांहि रोवें औ हँसे, उन्मत्त मदमे नित रहें,
नहिं होय तोषित भोगसू, नित कामकी बाधा दहे,
६—चलतीं मटकती चाल आतुर, स्वाद जिव्हाका चहे,
ऐसी कुनारी स्वत नाशे जयद्याल जैनी कहें,

हे राजन्! कुलवन्ती भार्य्या छुपाने योग्य अंगोंको सदा छुपाये रखती है। नीची दृष्टि करके चलती है। किसीसे भी, चाहे जैसा संभाषण नहीं करने लगती है । कुटुम्ब भरसे प्रीति, और जीव मात्र पर करुणा भाव रखती है। दुखित भुखितका दुख दूर करती है। धर्मात्मा जीवोंसे

पवित्र प्रेम रखती है । देव, धर्म और सच्चे गुरुकी भक्ति+ करती है । देवदर्शन, स्वाध्याय आदि धर्मकार्यों में अनुरक्त रहती है । प्रत्येक सामान स्वच्छ सुव्यवस्थित रखती और प्रत्येक काम पूरा करती है । मकान भी बिलकुल स्वच्छ और सजीला रखती है । रसोई सुस्वादु और शुद्धता पूर्वक करती है । ऐसी कुलवन्ती भार्य्या होनेसे घर स्वर्ग बन जाता है । थोडीसी भी आयसे [आमदनीसे] ऐसी गृहस्थीका निर्वाह बडे सुचारु रूपमें बड़े अच्छे ढंगसे होता जाता है । और लोग कहते हैं कि यह स्त्री कैसी सती लक्ष्मी है । यही गृहस्थी सुखी है ।

बहुतेरी श्रीमतियां ऐसी होती हैं कि, जहां उन्होंने गृहस्थीमें पैर रखा कि गृहस्थी तीन तेरह हुई । जहां तहां सामान बिखरा पड़ा रहता है; मकान मैला होता है; प्रत्येक काममें अधूरापन रहता है और प्रत्येक बातमें अव्यवस्था (ढील पोल) होती है । उनकी मूर्खतासे घरमें फूट और नानाप्रकारके रोग फैलते है । (मैलापन और बुरी रसोई तथा चित्तकी अस्वस्थता ही रोगके कारण हैं ।) जहां आलसी, दरिद्र और मूर्ख-स्त्रियां हुई वहां शोक, दुःख

+ भक्तिका आशय चाटुकारी या अंध श्रद्धासे नहीं हैं ।

—संशोधक ।

और अकीर्तिका घर ही समझिए । ऐसी स्त्रियोंकी सन्तति भी इन्हीं जैसे कुलक्षणोंसे भूपित होती है । बुद्धि, विद्या, धर्म, कर्म, सत्य, शील और संयम आदिसे तो वह बिलकुल कोरी होती है। हां, सप्त व्यसनोंमेंसे कोई एक अथवा अनेक व्यसन, रोग, और अनेक कुलक्षण अवश्य ही उसमें जन्म सिद्ध होते हैं । वह अल्पायु होती है । सो महाराज, घवराइये नहीं। इन्हीं सव वातों पर और बहुत कुछ अनुभव पर यह स्त्रीपरीक्षा निर्भर है, और इसी तरह मैने भी परीक्षाकी है। क्षमा कीजिए। *

राजाने इसे भी पुरस्कार दिया और घीकी मात्रा वढवा दी। राजाके मनमें वड़ा कौतूहल हुआ और उसने चौथे सूरदासको बुलवाकर कहा—सूरदास! तुमने कहा था कि तुम पुरुप-परीक्षा अच्छी जानते हो। अच्छा, निस्संकोच हो मेरी सच्ची परीक्षा करो । सूरदासने कहा—महाराज यदि आप पीछे 'क्यों और कैसे' करना चाहें, तव तो क्षमा कीजिए, मुझसे परीक्षा न करवाइये। और यदि जितना कहू उतने ही पर सन्तोप कर लेना चाहें, तो आज ही क्या करू, मैने बहुत पहिलेसे आपकी परीक्षा कर रक्खी है, सो सुनिए।

* स्त्रियां गुणों, शरीर गठन, स्वभाव और रूप आदिके भेदसे चार प्रकारकी बताई जाती हैं १ पद्मिनी, २ चित्रिनी, ३ शखिनी, ४ हस्तिनी । इनकी अच्छाईका क्रम भी यही है।

राजाने इस बातको स्वीकार करके कहा कि अच्छा कहो। तब सूरदासने कहा, महाराज! आपकी आज्ञानुसार निवेदन है कि, आपका स्वभाव वैश्यों-बनियों-का सा है। सारी सभा-समेत राजा बडा ही चकित हुआ। राजा विचारवान था। सोचने लगा, क्या मेरी माता दुराचारिणी है? सच है, अग्नि, जल, नदी, सर्प, सिंह, स्त्री, ज्वारी, चोर और जार आदि कुटिल स्वभाववालोंका विश्वास क्या? इसीलिए तो किसी कविने कहा है:—

तीनो ही त्रिलोक बीच, जेती है वनस्पती,
लेखनी सम्हारे ताकी, करके तुरतजू।
तीनो ही त्रिलोक बीच, जेते है समुद्र द्वीप,
पर्वतकी स्याही कर, आनके भरतजू।
तीनों ही त्रिलोक बीच, परी है जो जेती भूमि,
ताहीके सम्हार आछे, पत्र ले करतजू।
शारदा सहस्र कर करके लिखत सदा,
कामिनी चरित्र तोऊ, लिखे न परतजू॥ +

राजा इसी भांति सोचता विचारता सभासे उठ गया और राजमाताके पास पहुँचा। बडी नम्रतासे कहने लगा

+ मनहर कवित्त। ये वचन अधम स्त्रियोंको ही लगते हैं। वैसे तो स्त्रियां जगज्जननी हैं। संसारकी शांति हैं। गंभीरता और स्वार्थ त्यागका आदर्श हैं। और अनेक बातोंमें—गुणोंमें—तो मनुष्योंसे भी बढी चढी हैं। अजना और सीता आदिका चरित्र पढ देखो। —संशोधक।

कि, माँ! भवितव्य बलवान है । बडे बडे देव, चक्रवर्ती आदि उसके चक्रमें आ जाते हैं । इसी भाँति यदि तुम भी आ गई हो, तो कोई चिन्ता नहीं । सत्य कहना, कि मेरे स्वभावमें क्षत्रियोचित उदारतादि गुण क्यों नहीं है । माताने कहा कि पुत्र, बात यह है कि, एक दिन मैं छतपर बैठी बैठी अपना शृंगार कर रही थी । उसी समय कल्याण-राय सेठ अपने छत पर बैठा बैठा एक सुन्दर रागनी गा रहा था । अकस्मात् दोनोंने दोनोंको देखा, और अवसर पा दुर्भावनाने जन्म लिया । ठीक उसी रातको तुम्हारे पितासे मैं गर्भवती हुई । सो और तो कुछ नहीं है, केवल उस दुर्भावनासे ही तुमपर यह प्रभाव पडा है । क्योंकि ठीक उसी दिन मैं मासिक धर्मसे निश्चिन्त हुई थी । पुत्र! तुम विश्वास करो । मै किये हुए पापोंको छुपाकर घोर अपराधिनी नहीं हुआ चाहती । जो बात थी मैंने स्पष्ट कह दी है।

राजा वहासे दरबारमें आया। चारों सूरदासोंका अच्छा वेतन बांधकर सभामें रक्खा। सोचना चाहिए कि, माताके विचारोंका और विशेष कर ऋतुकालके विचारोंका सन्तति पर कितना असर पडता है । कि कहां तो रणशूर, तपशूर और दान शूर क्षत्रियका पुत्र और कहां क्षुद्रहृदय, अनुदार और स्वार्थी वणिकोंका सा स्वभाव ?

ऋतुकालमें कैसी सावधानी रखनी चाहिए, सो संक्षेपमें नीचे लिखी जाती है।

ऋतुस्राव होना प्राकृतिक नियम है, और वह स्त्रियोंको हर महीने हुआ करता है। कभी कभी यह कुछ जल्दी और कभी कुछ देरीसे भी होता है, परन्तु जब नियमित रूपसे यह कुछ अधिक कम दिनोंमें (अर्थात् पन्द्रह दिन या बीस दिनमें) अथवा अधिक ऊंचे दिनोंमें (अर्थात् डेढ डेढ़ दो दो महीने या इससे भी ज्यादा दिनोंमें) आने लगे तब समझना चाहिये, कि यह किसी रोगसे विकृत हो गया है। और इसकी किसी योग्य चिकित्सकसे चिकित्सा करानी चाहिए।

किसी रोग आदिके कारणसे यदि १८ दिनके पहिले रजो दर्शन हो तो उसकी शुद्धि स्नान मात्रसे हो जाती है। और यदि १८ दिनके पीछे हो तो उसका पूरा अशौच मानना चाहिए।

रजोवती स्त्रीको किसी भी प्रकारकी कुचेष्टा और नदीमें स्नान करना सर्वथा वर्ज्य है। (न करना चाहिए।)

जब स्त्रीको जान पडे कि रजोदर्शनसे मेरे कपड़े अशुद्ध हो गए हैं, तो उसी समयसे किसी वस्तुको न छुए। यदि भोजन करते-समय रजोदर्शन हो, तो भोजन छोडकर स्नान करे, पश्चात् भोजन करे। जो ऐसी अवस्थामें यदि

बच्चेको किसी वस्तुके स्पर्श करानेकी जरूरत हो तो बच्चेको स्नान कराले।

एकान्त स्थानमें रहे और आत्म चिन्तवन करे। अपनी अवस्थाको विचारे, और देश जाति तथा धर्मकी उन्नतिके उपाय सोचे *। शय्यापर शयन न करे, किन्तु चटाई पर सो वे। यदि चटाई पर न सो सके तो ऐसे कपडों पर सोवे जो नित्य धोये या धुलाए जाकर शुद्ध किये जा सकें। गरिष्ट-भोजन और पान इलायची आदि मसाले भक्षण न करे। शृंगार न करे। आँखोंमें सुरमा न आँजे—न लगावे। गान न गावे। हँसी मसखरी न करे। मन्दिरमें न जावे। पतिसे भी बातचीत या हँसी न करे। ऐसे समयमें यदि कोई मूर्ख पति काम-सेवन करे तो उसे सुजाक गर्मी आदि भयानक रोग हो जानेकी अत्यधिक संभावना है। वैद्यकके सिद्धान्तोंके अनुसार, इस समयके काम-सेवनसे, एक तो गर्भ रह नहीं सकता, और यदि कथंचित रह जाय तो बुद्धिहीन, दुष्ट, हीनाङ्ग (अपूर्णांग), और कुमार्ग-प्रिय सन्तान होती है। ऋतुमती स्त्रीके स्पर्शसे बहुत ज्यादा बचना चाहिए। उसकी परछाई मात्रसे, ताजे बने और बनते हुए पापड बड़ियां और अचार बिगड जाते हैं।

* महत्पुरुषोंकी जीवनिया, सती महिलाओंके चरित्र, सुन्दर गृहस्थोपयोगी निर्दोप उपन्यास और भिन्न भिन्न विषयोंकी पुस्तकें पढ़ना भी मैं बहुत उपयोगी समझता हू। —संशोधक।

रक्तस्राव जिस दिनसे आरंभ हुआ हो उसके चौथे दिन (अर्धरात्रिके पीछे आरंभ हुआ हो तो दूसरे दिनसे शुमार करना चाहिए) स्नान कर शुद्ध हो गृहस्थीसंबंधी कार्य कर सकती है। शृंगार आदि भी आज कर सकती है। पाचवें रोज नहा धोकर भगवानकी पूजन, शास्त्र स्वाध्याय, और रसोई आदि भी कर सकती है। जो स्त्री इस प्रकार नियम पूर्वक आचरण करती है, वह यदि पहिले दिन गर्भवती हो जाय (ऋतु स्नानके पश्चात्) तो सुन्दर, सौभाग्यशालिनी, सुलक्षणा और धर्मात्मा सन्ततिको जन्म दे। यदि दूसरे दिन गर्भवती हो तो, किसी सुयोग्य प्रतापयुक्त सन्ततिको जन्म दे। और इसी तरह तीसरे और चौथे दिन आदिमें गर्भ धारण करने पर भी योग्य सन्तान होती है। परन्तु ऐसा हो कैसे ? हमारी जातिमें तो कूट कूटकर अज्ञान भर गया है। जिसके फलस्वरूप हमारी जाति निकृष्ट, निर्बल और मूर्ख होती जा रही है। किया क्या जाय। लोग शास्त्रोंकी सोनहरी * बातें भूल गए हैं। सच्चे हितैपियोंकी उपदेश पूर्ण बातों पर ध्यान नहीं देते। जाति और धर्मके उदय चाहनेवाले उपदेशकों और प्रबोधकोंकी दिल्लगी उड़ाते हैं। उन्हें अपमानित करते हैं। अल-

* उन्हीं बातोंकी ओर संकेत है जो शास्त्रसम्मत होनेपर भी हम नहीं मानते–उनके अनुसार नहीं चलते।

—संशोधक।

चार-गजटों-से प्रेम नहीं है, फिर किस रास्तेसे ये सुमार्ग पर आयेंगे सो भगवान जाने । भला, उपर्युक्त कार्यवाहीसे किस तरह हमें धर्म-अधर्म, कर्तव्य, न्याय-अन्याय और योग्य अयोग्यकी पहिचान हो। कुछ विद्वानोंकी दशा तो ऊपर लिखे जैसी हुई। अब रहे स्वार्थ और अपना उल्लू सीधा करनेवाले मतलब गांठनेवाले वे गुणवान्, जिनकी समाजमें कुछ चलती है। सो यदि, वें स्वार्थी है तो, न्यायका उपदेश नहीं कर सकते–सुसम्मति नहीं दे सकते, क्योंकि इससे उनके इष्ट कार्य्यमें विघ्न पड सकता है । रहे श्रीमान् सज्जन गण, सो प्रति शत दो एकको छोडके शेष विद्या–शत्रु और धनके मदसे उन्मत्त है । उन्हें मनुष्य जीवनके उपयोग और कर्तव्यका ध्यान ही नहीं है । धर्मकी वास्तविकताको वे बेचारे जानते ही नहीं हैं । अब हे डूबती हुई समाज नौकाके निरवलम्ब आरोहियो–सवारो ! हे भाई बहिनो ! किसीका आश्रय न ताको; अपने शास्त्रोंका खूब बारीकीसे पठन और मनन करो, खूब विद्योपार्जन करो; वास्तविक धर्म पहिचानो, कर्तव्य और अकर्तव्यकी परिभाषा सीखो; पुण्य पापकी पहिचान करो, अकर्तव्य और पापको छोडो; कर्तव्य और पुण्यसे प्रेम करो, जिससे तुम्हारा कल्याण हो। स्मरण रक्खो, तुम अपने बुरे भले भाग्यके बनानेवाले आप हो ।



पंचम प्रकरण



मिथ्यात्व-निषेध

कुगुरु कुदेव कुधम औ, अग्रहीत मिथ्यात।
सेवन कर जग-जन-दुखी, भोगें तीव्र असात॥

तुमने क्या कभी विचार किया है, कि जीव, पुद्गल आदि षट द्रव्य और जीव, अजीव, आस्रव आदि सात तत्वों का स्वरूप क्या है? और इनका श्रद्धान करनेसे क्या होता है? क्या कभी सोचा है, कि मै कौन हूं? कहांसे आई हूं? मेरा इन कुटुम्बियोसे संबंध होनेका कारण क्या है? इस पर्य्यायके पीछे मुझे कहां जाना होगा? मेरे साथ कौन कौनसी सामग्री जाएगी? मैं रात दिन जो कुछ अच्छा बुराकरती हूं इसका फल क्या होगा? परलोक क्या है? तुमने कभी इन बातोंको नहीं सोचा, और इसी लिए अंधोंकी नाई मनमाने मार्ग पर चल रहीं हो। तुम्हें आवश्यक है कि, सुगुरु, सुदेव और सुधर्मका समागम करो। निस्स्वार्थी विद्वानोंके व्याख्यान सुनो। तब तुम्हें मालूम हो जायगा कि आत्मा किस तरह अपने आपको भूलरहा है; शरीरमे

प्यार कर रहा है; और उसीके लिए-उसीके भरण-पोषण और रक्षाके निमित्त-मनुष्य, तिर्यंच और नर्क पर्यायोंमें भ्रमण करता है; पुण्यपाप उपार्जन करता है; और उसके अनुसार सुख दुख उठाता है। कोई भी देवी देवता, या परमेश्वर उसे रोकनेमें असमर्थ है। अर्थात् प्रत्येक आत्मा अपनी भलाई और बुराई करनेमें स्वतंत्र है, उसके मार्गमें उसके सिवाय कोई दूसरा कांटे नहीं बिखरा सकता-रोडे नहीं अटका सकता। इसलिये हमें मिथ्या कल्पनाओंको छोड देना चाहिए और गृहस्थके धार्मिक षटकर्मोंमें दत्त चित्त रहना चाहिए। कर्तव्य पालनेवाले ही पुण्य उपार्जन करते है। और पुण्यवान ही सुख भोगते हैं। परन्तु जो कोई भी अपना हित भूलता है, श्रावक कुल, जिनधर्म और सत्य उपदेशके समागममें या धर्ममें संलग्न नहीं होता, वह अपनी इस अज्ञानतासे अन्तमें दुःख उठाता है। बहुतसी स्त्रियां सती, दुर्गा, सय्यद आदिकी पूजा करती है; पीपल बड आदिको किसी फलकी आशासे सींचतीं है; गोबर या मिट्टीके देवता बना पूजती है; भीतों पर भी देवताओंके चित्र निकाल उनकी पूजन-अर्चन करती हैं, सूर्य चन्द्रमाको अर्घ्य देती है; दिवालीको लक्ष्मी-रुपये, अशर्फी आदि-की पूजा करती है; एकादशी अथवा चौदशको देव उठावनी करती हैं; पूर्णिमाको गंगामें स्नान करती है;

गौर पूजतीं और महादेवको जल चढाती हैं; शिवरात्रि और ग्रहणका व्रत करती है, अनेक पीर, फकीर और साधुओंको पूजती है; और इस तरह धर्म छोडती, पैसा वरबाद करतीं, और अपने अमूल्य सतीत्वका भी बलिदान कर देती है;

उन्हें सोचना चाहिए कि संसारमें सब जीव अपने किए कर्मोंका फल भोगते हे । इन्द्र, जिनेन्द्र, और कोई भी देवदेवी उसमें थोडा भी अन्तर नहीं ला सकते। सच्चे देव, शास्त्र और गुरुको माननेसे चित्त निर्मल होता है; रागद्वेष घटता है; जिससे पुण्यके साथ सुखकी प्राप्ति होती है। परन्तु रागी द्वेषी देव और गुरु तथा असर्वज्ञ भाषित धर्मके समागमसे कषाएँ बढती है, और पापका वन्ध होता है, और पापके वन्धसे दुःख होता है। कभी कभी स्त्रियोके निर्बल हृदयोंमें भयका भूत और व्याभिचारका ब्रह्म-दैत्य घुस बैठता है, सो कभी कभी तो वास्तवमें कोई भूत पिशाच आ सताता है, [वेचारोंका भक्तों पर ही जोर चलता है] और नही तो ये केवल बहाने मात्र होते है। कहनेका सारांश यह कि, जैन सरीखी उत्तम जातिमें, श्रावक सरीखे उत्तम कुलमें जन्म लेकर, सर्वोत्कृष्ट, सर्व दोषरहित और सर्वगुण संपन्न जिनेन्द्रके उपासक बनकर हम क्यों ऐसे गैरोंको ढूढते फिरते हैं? यह तो वही हुआ

कि अपने हीरेका कुछ भी मूल्य न करते हुए दूसरोंके काँच लेनेको दौड़ा जाय। उन्हें सोचना समझना चाहिए। और जैन धर्मके द्वारा अपना कल्याण करना चाहिए। दूसरोंकी देखा देखी हमें गड्ढेमें न गिरना चाहिए; कुगुरु, कुदेव और कुधर्मकी पूजा अर्चासे बचना चाहिए। थोड़ा विचार करना चाहिए कि, जैनधर्म और अन्य धर्मोंके सिद्धान्तोंमें कितना और कैसा अन्तर है। कहाँ जैन धर्म तो मोक्षका साधक, और अन्य धर्म मोक्षके बाधक, अर्थात् संसारके साधक*। यह जीव बिना पूरी वीतरागताके कदापि निष्कर्म याने मुक्त नहीं हो सकता; और उस वीतरागता प्राप्त करनेका साधन संसारमें एक जैनधर्म ही है, जिसमें मानो वीतरागता कूट कूटकर भरी गई है। भूधरदासजीने अपने जैन शतकमें एक जगह कहा है।

कैसे कर केतकी कनेर एक कही जाय,
आक दूध गाय दूध अन्तर घनेर है।
पीरी होत रीरी पे न रीस करै कंचन की,
कहा काकवाणी कहा कोयलकी टेर है॥

* जीव जबतक शुभाशुभ कर्मोंको करता है तब तक नियमसे उसका जन्म मरण होता रहता है, इसीको संसार कहते हैं। परन्तु जब यह जीव कर्मरहित हो शुद्ध अवस्थाको प्राप्त हो जाता है, तब मुक्त कहलाता है। दूसरे मतोंमें बहुधा स्वर्गको ही मोक्ष माना है अथवा मोक्षका स्वरूप यथार्थ नहीं कहा है। इसलिए वे धर्म, सच्चे मोक्ष व उनके कारणोंसे भी अनजान हैं, और इसीलिए मान्य नहीं हैं।

कहा भानु-तेज भारो कहा आगिया विचारो,
पूनोको उजारो कहा मावस-अंधेर है।
पक्ष छोर पारखी निहार नैन नीके कर,
जैन वैन और वैन इतनो ही फेर है॥

सम्पूर्ण शास्त्र यही कहते है कि, विष खाना, अग्निमें जलना, जलमें डूब मरना आदि अज्ञानताके कार्य्य तो एक ही जन्ममें दुःख देनेवाले हैं (?) परन्तु आत्मस्वरूपके भुलानेवाले, अकर्तव्यके करानेवाले, ज्ञानशून्य जगतके ठगनेवाले कुगुरु आदिका पूजन-वंदन अनेक जन्मके, जन्म मरणका कारण होता है। उपदेश सिद्धान्त रत्नमालामें कहा है

सप्पो इक्कं मरण, कुगुरु अणता देइ मरणाई।
तो वर सप्पो गहिय, मा कुगुरु सेवण भद्द॥

अर्थात् सर्पके काटनेसे तो एक ही वार मरण होता है, पर कुगुरुके सेवनसे अनन्त जन्ममरण होते है। इसलिए हे भद्र सज्जनो! सापका ग्रहण करना तो भला, परन्तु कुगुरुका सेवन सर्वथा त्याज्य है।

जो स्त्रियां, पुत्र, सम्पदा और सुख आदिकी इच्छासे ढोंगियोंको पूजती मानती है, वे उनके द्वारा ठगाई जाती हैं, व्यभिचारिणी बनाई जाती है। शास्त्रोंमें कहा है:—

जह कुवेस्सा रत्तो, मुसिज्जमाणोवि मस्मये हरिस।
तह मिच्छवेस मुहिया, गय पिण मुणन्ति धम्म णिह॥

अर्थ—जैसे कोई वेश्यासक्त पुरुष धनादिक ठगाता हुआ भी हर्ष मानता है, वैसे ही मिथ्यात्व भावसे ठगाए हुए जीव, अपनी धर्म-निधिके नाश होनेका कुछ भी विचार नहीं करते हैं।

जो स्त्री-पुरुष मन्दिरको नहीं जाते, सुचित्त हो दर्शन नहीं करते, शास्त्र नहीं सुनते, और विद्वान पंडितों द्वारा कभी तत्वोंके स्वरूपका निर्णय कर, कर्तव्य और अकर्तव्य स्थिर नहीं करते, भला उनका विश्वास एक जगह कैसे स्थिर रह सकता है, वे कभी तो उन्हें नमस्कार करते, कभी इनकी पूजा करते, कभी अमुकजीको नारियल चढाते, और कभी तमुकजीके यहा भंडारा कराते हैं। जैसे सडा नारियल या खोटा पैसा अनेक घरोंमें चक्कर लगाता फिरता है वैसे ही उन स्त्री पुरुषोंका माथा, अनेक देव देवियोंके आगे फूटता फिरता है। धर्म परीक्षामें कहा है:—

छप्पय—सर्व देव नितनमे, सर्व भिक्षुक गुरु माने,
सर्व शास्त्र नित पढे, धरम अधरम नाहिं जाने,
सर्व विरत वितकरे, सर्व तीरथ फिर आवे,
परब्रह्मको छोड, अन्य मारगको ध्यावे,
इस प्रकार जो नर रहे, इसी भाति शोभा लहे।
आश्चर्य! पुत्र वेश्या तनो, कहो पिता कासो कहे॥

कहा भानु-तेज भारो कहा आगिया विचारो,
पूनोको उजारो कहा मावस-अँधेर है।
पक्ष छोर पारखी निहार नैन नीके कर,
जैन वैन और वैन इतनो ही फेर है॥

सम्पूर्ण शास्त्र यही कहते हैं कि, विष खाना, अग्निमें जलना, जलमें डूब मरना आदि अज्ञानताके कार्य्य तो एक ही जन्ममें दुःख देनेवाले है (?) परन्तु आत्मस्वरूपके भुलानेवाले, अकर्तव्यके करानेवाले, ज्ञानशून्य जगतके ठगनेवाले कुगुरु आदिका पूजन-वंदन अनेक जन्मके, जन्म मरणका कारण होता है। उपदेश सिद्धान्त रत्नमालामें कहा है

सप्पो इक्क मरण, कुगुरु अणता देइ मरणाई।
तो वर सप्पो गहिय, मा कुगुरु सेवणं भद्द॥

अर्थात् सर्पके काटनेसे तो एक ही बार मरण होता है, पर कुगुरुके सेवनसे अनन्त जन्ममरण होते हैं। इसलिए हे भद्र सज्जनो! सापका ग्रहण करना तो भला, परन्तु कुगुरुका सेवन सर्वथा त्याज्य है।

जो स्त्रियां, पुत्र, सम्पदा और सुख आदिकी इच्छासे ढोंगियोंको पूजती मानती हैं, वे उनके द्वारा ठगाई जाती हैं, व्यभिचारिणी बनाई जाती हैं। शास्त्रोंमें कहा है:—

जह कुव्वेस्सा रत्तो, मुसिज्जमाणोवि मस्मये हरिस।
तह मिच्छवेस मुहिया, गय पिण मुणन्ति धम्म णिह॥

तो हिन्दू धर्म परसे उनकी श्रद्धा उठ जायगी *। और मुसलमान सुजाखे इस तरह हैं कि, अपने इष्ट, सिवाय एक खुदाके, दूसरेको मानने पूजनेका विचार स्वप्नमें भी नहीं करते। वे साफ साफ कहते हैं "जिसके ईमानमें फर्क है उसके बापमें फर्क है"। इन बातोंसे जाना जाता है कि जैनी लोग हाथमें दीपक लिए हुए जान बूझकर कुएँमें गिरते हैं। जैनियोंकी स्त्रियोंमें यह खूब देखा जाता है कि, उन्हें जैसे ही कोई पीडा हुई कि, फौरन ओझा और जोगियोंकी पुकार हुई। वे लोग भी, कोई तो पितरोंकी कुनट, कोई भूत प्रेत या चुडैलका लगना, और कोई शनैश्चर आदिका प्रकोप वताते हैं, और मन माना लूटते खसोटते हैं। भोली स्त्रियांभी पाखडियोंके पाखडमें आ जाती है। और शीतला, भैरूं, महादेव आदिको नाना प्रकारसे पूजतीं, वदमाशोंको माल खिलातीं और उनसे बिगडती हैं। अंडे चढवातीं, दूसरोंसे वलिदान करवातीं, कवरस्तानोंकी मानता मानतीं और ताजियोंको रेवडी चढाती हैं। तावीज वँध-

* इस लोकोक्तिका कारण वह नहीं जान पडता, जो लेखक महाशयने बताया है। वह समय गया जब लोग ऐसा कहते थे। भारतका पुन उदय होनेवाला है। लोग धार्मिक-द्वेप बिलकुल भूलते जा रहे हैं। परन्तु अनुदार जैन जाति अपनी ही दूसरी दूसरी जातियोंमे दुर्व्यवहार करती है, धार्मिक स्वतन्त्रता छीनती है, मन्दिरमें नहीं आने देती, दर्शन पूजा आदि नहीं करने देती, फिर बेचारे हिन्दुओंको तो पूछना कौन है। उदाहरणके लिए दसा श्रमवालों और दसा परवारों पर होता हुआ दुर्व्यवहार देखिये। —संशोधक।

अजैन लोग जैनियोंकी दिल्लगी उडाते है और कहते है कि जैनी, देवी देवताओंकी कितनी निन्दा करते है परन्तु छिपे छिपे किस तरह पूजन–अर्चन आदि करते हैं कैसे निर्लज्ज और दंभी है। इतना सुनते रहने पर भी, जैनी अपने आचरणोंको नहीं सुधारते।

जैनियोंके घरोंमें स्त्रियोंकी इतनी चलती है कि उनके साम्हने पुरुप मानों गुलाम ही है। कहावत है " जैनी अंधे हिन्दूकाने, मुसलमान सुजाखे* " और बात भी ठीक है— अपने शास्त्रों द्वारा सुदेव, कुदेव, सुगुरु, कुगुरुका स्वरूप सुनने समझने पर भी खोटे मार्ग पर चलते है। इसी लिए जैनी अंधे हैं। हिन्दूकाने यों है कि, विना समझे, लकीरके फकीर बने सब देवोंको मानते पूजते है, केवल जैन धर्मसे दूर जाते है। अपने ही शास्त्रोंमें लिखे हुए ऋपभावतारकी भी निन्दा करते हुए कहते है " हस्तिना पीड्यमानोपि न गच्छेज्जैन मन्दिरम् " अर्थात् हाथीके पैरके नीचे दव कर मर जाना भला, पर जैन मन्दिरमें जाना अच्छा नहीं। उनके ऐसा कहनेका यही प्रयोजन है कि अगर लोग जैन मन्दिरमें जाकर प्रत्येक मर्मको अच्छी तरह समझ जायँगे

* यह कहावत सिवाय इस पुस्तकके न तो कहीं पढनेमें आई है और न सुननेमें ही। पर यहां इसका जो भावार्थ है वह अच्छा है।

—संशोधक।

तो हिन्दू धर्म परसे उनकी श्रद्धा उठ जायगी *। और मुसलमान सुजाखे इस तरह हैं कि, अपने इष्ट, सिवाय एक खुदाके, दूसरेको मानने पूजनेका विचार स्वप्नमें भी नहीं करते। वे साफ साफ कहते हैं "जिसके ईमानमें फर्क है उसके बापमें फर्क है"। इन बातोंसे जाना जाता है कि जैनी लोग हाथमें दीपक लिए हुए जान बूझकर कुएँमें गिरते हैं। जैनियोंकी स्त्रियोंमें यह खूब देखा जाता है कि, उन्हें जैसे ही कोई पीडा हुई कि, फौरन ओझा और जोगियोंकी पुकार हुई। वे लोग भी, कोई तो पितरोंकी कुनट, कोई भूत प्रेत या चुडैलका लगना, और कोई शनैश्चर आदिका प्रकोप बताते हैं; और मन माना लूटते खसोटते हैं। भोली स्त्रियाँभी पाखंडियोंके पाखडमें आ जाती हैं। और शीतला, भैरूं, महादेव आदिको नाना प्रकारसे पूजतीं, बदमाशोंको माल खिलातीं और उनसे बिगडती हैं। अंडे चढवातीं, दूसरोंसे बलिदान करवातीं, कब्रस्तानोंकी मानता मानतीं और ताजियोंको रेवडी चढाती हैं। तावीज बँध-

* इस लोकोक्तिका कारण वह नहीं जान पड़ता, जो लेखक महाशयने बताया है। वह समय गया जब लोग ऐसा कहते थे। भारतका पुन उदय होनेवाला है। लोग धार्मिक-द्वेष विलकुल भूलते जा रहे हैं। परन्तु अनुदार जैन जाति अपनी ही दूसरी दूसरी जातियोंमे दुर्व्यवहार करती है, धार्मिक स्वतनता छीनती है, मन्दिरमें नहीं आने देती दर्शन पूजन आदि नहीं करने देती, फिर बेचारे हिन्दुओंको तो पूछना कौन है। उदाहरणके लिए दसा अग्रवालो और दसा परवारों पर होता हुआ दुर्व्यवहार देखिये। —संशोधक।

वार्ती, भभूतखाती, और न जाने क्या क्या गंडे डोरे करवाया करती है। गनीमत थी, यदि वे इससे सुखी भी होतीं, पर ऐसा होता नहीं है। इस तुच्छ भ्रमजालमें पड़कर वे केवल दुखी ही और होती हैं। यदि जराभी विचारशक्तिको काममें लावें तो स्वयं सोच सकती हैं कि, ये तुच्छ देव, गुरु जब स्वयं ही दुखी है, तो दूसरोंके दुखको क्या दूर करेंगे। और फिर " होनहार होके रहे " सुख दुख कर्मानुसार होते है। उसमें अन्तर डालनेमें कोई भी समर्थ नहीं है।

हिन्दुओंके यहां एक कहावत कही जाती है और वह यह है:—

> देवी दुरगा, सेढ शीतला, सब मिल हरिपै आय।
> बोलीं हरि! सब तुमको पूजे, अब हम कैसे खायँ॥
> तब हरिजी झट यो उठ बोले, भूमण्डलमे जाओ।
> जिसघर मेरो नाम नहीं है, उसको लूटो खाओ॥

जिससे मालूम होता है कि हिन्दूलोग भी और खासकर समझदार हिन्दू लोग इन्हें-देवी देवताओंको नहीं मानते जानते। कोई जैन धर्मके तत्वको न समझनेवाली स्त्री यहा कह सकती है कि, हम बालबच्चेवाले आदमी यदि ऐसा न करें तो चल नहीं सकता। हम ऋषि मुनि तो हैं ही नहीं, जो सब त्याग कर बैठ जायँ। बाल बच्चोंका साथ है, यदि दुर्गा और

शीतला आदिको न मानें तो उनकी—बालबच्चोंकी—रक्षा कौन करे। उनसे मैं पूछता हूं कि, देव देवियोंके पुजारियोंकी—उन स्त्री पुरुषोंकी जिनकी नाक देवी देवताओंके आगे नमस्कार करते करते रगड गई है—पिस गई है, संतति (बालबच्चे) क्यों मर जाती है? माता शीतलाके पूजनेवाले—बडी ही भक्ति करनेवाले—स्त्री पुरुषोंके बालबच्चे माताकी ही बीमारीमें क्यों मर जाते हैं? क्या शीतला उनकी रक्षा नहीं कर सकती? (हा वास्तवमें ही नहीं कर सकती।) तो फिर पूजा पाठ किस लिए? अच्छा अब दूसरी तरहसे सोचो। अंग्रेज, मुसलमान और दूसरे दूसरे वे मनुष्य जो देवी देवताओंको नहीं मानते, नहीं पूजते, उलटी उनकी निन्दा और अविनय करते हैं, उनकी सन्तान क्यों भली चगी रहती है। शीतलाके रोगसे अच्छी क्यों हो जाती है? सबकी सब मर ही क्यों नहीं जाती। क्योंकि देवी तो उन पर नाराजही होगी। मेरी भोली और मूर्ख बहिनो, जो कुछ भी अच्छा या बुरा होता है सब अपने भाग्यसे, सब अपने शुभ या अशुभ कर्मके फलसे। कोई देवी देवता, पीर पैगम्बर, कोई क्षेत्र पाल या कोई तीर्थंकर, तुम्हारे भाग्यको बदल नहीं सकता। अपने कर्मोंका बुराभला फल तुम्हें देखना ही होगा, भोगना ही होगा। उसको कोई भी टाल नहीं सकता। प्राकृत पिङ्गल सूत्र २ परिच्छेद १०२ में कहा है:—

वार्तीं, भभूतखार्तीं, और न जाने क्या क्या गंडे डोरे करवाया करती हैं। गनीमत थी, यदि वे इससे सुखी भी होतीं, पर ऐसा होता नहीं है। इस तुच्छ भ्रमजालमें पड़कर वे केवल दुखी ही और होती हैं। यदि जराभी विचारशक्तिको काममें लावें तो स्वयं सोच सकती है कि, ये तुच्छ देव, गुरु जब स्वयं ही दुखी हैं, तो दूसरोंके दुखको क्या दूर करेंगे। और फिर "होनहार होके रहे" सुख दुख कर्मानुसार होते हैं। उसमें अन्तर डालनेमे कोई भी समर्थ नहीं है।

हिन्दुओंके यहां एक कहावत कही जाती है और वह यह है:—

देवी दुरगा, सेढ शीतला, सब मिल हरिपै आय।
बोली हरि! सब तुमको पूजें, अब हम कैसे खायँ॥
तब हरिजी झट यों उठ बोले, भूमण्डलमे जाओ।
जिसपर मेरो नाम नहीं है, उसको लूटो खाओ॥

जिससे मालूम होता है कि हिन्दूलोग भी और खासकर समझदार हिन्दू लोग इन्हें-देवी देवताओंको नहीं मानते जानते। कोई जैन धर्मके तत्वको न समझनेवाली स्त्री यहा कह सकती है कि, हम बालबच्चेवाले आदमी यदि ऐसा न करें तो चल नहीं सकता। हम ऋषि मुनि तो हैं ही नहीं, जो सब त्याग कर बैठ जायँ। बाल बच्चोंका साथ है, यदि दुर्गा और

शीतला आदिको न मानें तो उनकी—बालबचोंकी—रक्षा कौन करे। उनसे मैं पूछता हूं कि, देव देवियोंके पुजारियोंकी—उन स्त्री पुरुषोंकी जिनकी नाक देवी देवताओंके आगे नमस्कार करते करते रगड़ गई है—पिस गई है, संतति (बालबच्चे) क्यों मर जाती है? माता शीतलाके पूजनेवाले—बडी ही भक्ति करनेवाले—स्त्री पुरुषोंके बालबच्चे माताकी ही बीमारीमें क्यों मर जाते है? क्या शीतला उनकी रक्षा नहीं कर सकती? (हा वास्तवमें ही नहीं कर सकती।) तो फिर पूजा पाठ किस लिए? अच्छा अब दूसरी तरहसे सोचो। अंग्रेज, मुसलमान और दूसरे दूसरे वे मनुष्य जो देवी देवताओंको नहीं मानते, नहीं पूजते, उलटी उनकी निन्दा और अविनय करते हैं, उनकी सन्तान क्यों भली चंगी रहती है। शीतलाके रोगसे अच्छी क्यों हो जाती है? सबकी सब मर ही क्यों नहीं जाती। क्योंकि देवी तो उन पर नाराजही होगी। मेरी भोली और मूर्ख बहिनो, जो कुछ भी अच्छा या बुरा होता है सब अपने भाग्यसे, सब अपने शुभ या अशुभ कर्मके फलसे। कोई देवी देवता, पीर पैगम्बर, कोई क्षेत्र पाल या कोई तीर्थंकर, तुम्हारे भाग्यको बदल नहीं सकता। अपने कर्मोंका बुराभला फल तुम्हें देखना ही होगा, भोगना ही होगा। उसको कोई भी टाल नहीं सकता। प्राकृत पिङ्गल सूत्र २ परिच्छेद १०२ में कहा है:—

पाण्डव वसंहि जन्म करीजे।
सपअ अज्जिम धम्मक दीजे॥
साउजुहिट्टिर सकट पाआ।
देविक ललिअ केण मिटाआ॥

अर्थ—पाडव वंशमें जन्म लेनेवाले, उत्तम सम्पदा और धर्मके धारण करनेवाले युधिष्ठिर सरीखे महाराज भी जब संकटको प्राप्त हुए, तो कहिए भाग्यको कौन मेट सकता है?

स्वामि कार्तिकेयानुप्रेक्षामें कहा है:—

आउक्खयेण मरण, आउ दाऊण सक्कदे कोवि।
तह्मा देविन्दो विय, मरणाउ ण रक्खदे कोवि॥ १॥

अर्थ—आयु कर्मके क्षय होनेसे मरण होता है। आयु-कर्म देनेको कोई समर्थ नहीं है। इसी कारण देवपति इन्द्र भी किसीको मृत्युसे नहीं बचा सकता।

और भी देखिए, भगवान आदिनाथ, प्रथमतीर्थंकर, कर्म भूमिके प्रवर्तक ब्रह्मा, भरत चक्रवर्तीके पिता और इन्द्रादि देवोंके पूज्य थे। वे भी अन्तराय कर्मके प्रबल उदयसे छः महीने तक निराहार विहार करते रहे। परम पुरुषोत्तम भगवान रामचंद्रको वनवास और सरला सीताको वियोग प्राप्त हुआ। इसी प्रकार नवम नारायण श्रीकृष्णकी उत्पत्तिके समय न तो किसीने गाया, और न मृत्यु समय किसीने रुदन ही किया। इन दृष्टान्तोंसे जान पडता है

कि जैसे अच्छे और बुरे कर्म किए जाते है, उनके अच्छे या बुरे फल स्वयमेव मिलते ही है। जो स्त्रिया इतना जान कर भी योग्य उपाय नहीं करतीं वे दीपक हाथमें लेते हुए कुएँमें गिरती है। कैसी मूर्खताभरी बातें हैं, कि बच्चोंको शीतला निकलने पर इलाज तो करतीं नहीं, करती क्या है? माता-दुर्गाके गीत गाती है, उन्हे पूजती है; पूआपूरी ले और माथेपर अंगीठी रख माताके मठमें, उसे मनाने जाती हैं, दण्डवत करते करते मठ तक दौडती हैं। उन्हीं अपनी मूर्ख बहिनोंके लिए, माताकी बीमारीकी उत्पत्ति संक्षिप्तमें लिखता हूं। आशा है, वे अपनी अज्ञानता और कुदेवादिका पूजन-भजन छोड़ेंगीं।

प्रकट हो कि माताके पेटकी गर्मीका कुछ अंश सन्तानमें आ जाता है। वही विकार ऋतु, खान पान, या और कोई ऐसा ही कारण पाकर बालकके शरीरमेंसे चेचकके दानों —फुन्सियो—द्वारा बाहिर निकलता है, जिसे लोग चेचक, भवानी, माता, और शीतला आदि कई नामोंसे पुकारते है। यह केवल शारीरिक विकार है। किसी देव देवीका कोप नहीं है। इसके लिए लोग टीकाको अच्छा उपाय बताते है। कभी कभी टीकेकी सामग्री अच्छी न होनेसे जितना फायदा होना चाहिए, उतना नहीं होता। अर्थात् टीका लगने पर भी माताकी बीमारी कभी कभी निकल ही आती है।

इस बीमारीमें पहिले दो तीन दिन ज्वर आता है। फिर सिरसे फुन्सियोंका निकलना आरंभ होता है और थोडे दिनोंमें सारे वदन पर फुन्सिया हो जाती है । जब इस तरह चेचक निकलनेका हाल मालूम हो, तो घरमें कोई पक्वान्न न बनाना चाहिए। रोगीकी माताके सिवाय दूसरी रजस्वला स्त्रियोंकी दृष्टिसे उसे-माताके रोगीको-बचाना चाहिए। सर्द-ठंडी-चीजे अधिक तर न खिलानी चाहिए, किन्तु तर भोजन उसे देना चाहिए और सफाईके साथ रखना चाहिए। माताके गीत गा गा करके अपने पुत्रको हाथसे न खोना चाहिए, या अंधा, वहरा आदि न बनाना चाहिए । देखा गया है, कि इन दिनों बहुतेरी स्त्रियां इसलिए मन्दिर नहीं जाती कि, कहीं जिनेन्द्रके दर्शन करनेसे मातादेवी रुष्ट न हो जायँ। चलो अच्छा हुआ। यों ही दर्शन करने, जाप्य देने और स्वाध्यायकी इच्छा नहीं थी अब उसके लिए मूर्खता पूर्ण पूरा कारण (कहने सुननेमें) मिल गया। सच है " विनाश काले विपरीत बुद्धिः " अर्थात् जब बुरे दिन आते है तब बुद्धि भी भ्रष्ट हो जाती है । सारांश यह कि यदि वे ही भोली स्त्रियां मन्दिर जाएं; शास्त्र स्वाध्याय करें और विद्वानोंके व्याख्यान सुने तो ऐसी मूर्खताओंमे न पडें। क्योंकि कर्तव्य अकर्तव्यका ज्ञान उन्हें उन्हीं बातोंसे, शास्त्र स्वाध्याय और धर्मोपदेशसे-हो जाएं । वे अपना भला और बुरा समझने लगें। कोई बाई प्रश्न कर सकती है कि, कुगुरु, कुधर्म

और कुशास्त्रसे यदि कुछ नहीं होता तो फिर क्यों इतने मनुष्य उन्हें मानते है । इसका उत्तर यह है कि, बहुतसे आदमी यदि शराब पीते हैं, तो कुछ शराबका पीना अच्छा नहीं समझा जा सकता। अथवा यदि बहुतसे आदमी चोरी करते हैं, तो चोरी का करना अच्छा नहीं समझा जा सकता। कुदेवादिककी पूजन आदिका इसलिए विरोध है कि, उनकी पूजनसे राग द्वेष आदि दुर्भावोंकी वृद्धि होती है, जिससे पाप कर्मका बन्ध होता है, जो दुःखका कारण है। पर सुगुरु, सुदेव और सुधर्मकी पूजा-वन्दनासे विषय-कषाय घटकर परिणाम निर्मल होते हैं । जिससे पुण्य कर्मके बंधसे इष्ट सामग्रीका समागम होता है।

बालकोंके अज्ञानी, दुर्बुद्धि और अनाचारी होनेका एक कारण कुसंस्कार भी है । जो स्त्रियां नीच, व्यभिचारी और जगतके ठगनेवालोंके फन्दमें पड़ती हैं, वे अपना धर्म, कर्म, शील और श्रद्धान रूपी धन गमा बैठती हैं । आज-कल साधु, फकीर, भट्टारक और ऐसे ही और श्रद्धा-भक्ति-भाजन व्यक्ति महा अवगुणोंकी खानि हो रहे हैं—महा बने हुए होते हैं—स्त्रियोंको चाहिए, कि स्वप्नमें भी इन लोगोंके पास न जावें । ये पाखंडी और ठग लोग—ये रंगे हुए लहँए—ये बगलाभक्त जान बूझकर स्त्रियोंको बिगाड़ते हैं। ये लोग धर्मात्माओं सरीखे नाम और वेश रखके खूब माल खाते और मजा उड़ाते है । ये इन्द्रियों और मनको वश

करना तो दूर रहा, उलटे व्यभिचारके साज सजते हैं। और धर्मकी ओटसे चोट खेलते हैं। टट्टीकी आड़में शिकार करते हैं। धर्मबुद्धि और सच्ची स्त्रियोंके साम्हने इनकी दाल नहीं गलती। जब समाजका यह हाल है, तो क्यों न सारे दुर्गुणोंसे युक्त सन्तान होवे। परन्तु उन धर्मप्राण सच्ची स्त्रियोंकी सन्तान पुण्यके प्रसादसे सुशील, बलवान, गुणवान और विद्वान होती है। धर्मके प्रभावसे ऐसी स्त्रियोंकी सन्ततिको रोग पीड़ा आदि भी नहीं होती, और जो होती भी है तो शीघ्र ही शान्त हो जाती है। पुरुषोंको चाहिए कि ऐसे ढोंगी मायावी लोगोंके पास, अपनी स्त्रियोंको बहिन बेटियोंको जानेसे बचावें।

धर्मात्माकी तो परछांई मात्रसे दूसरोंके विघ्न, कष्ट, रोग और शोक दूर हो जाते हैं। धर्मकी महिमा अचिन्त्य है। पद्मपुराणमें परम शीलवती श्रीविशल्याकी कथा लिखी है कि, उसके पूर्व जन्मके जप, तप और शीलके प्रभावसे उसके स्नानोदकके—स्नान किए हुए पानीके—स्पर्शसे देशमें फैला हुआ मरी रोग शान्त हो गया। उसीसे लक्ष्मणकी शक्ति और घायल सैनिकोंके घाव-कष्ट दूर हो गए। घाव भर गए। यह सब सम्यग्दर्शनका ही प्रभाव है। और सच भी है, जिस सम्यग्दर्शनके प्रभावसे मोक्ष रूपी अक्षय सम्पदा प्राप्त हो जाती है; जन्म मरण जैसा अद्वितीय प्रबल रोग

दूर हो जाता है; तो साधारण शारीरिक रोगोंका कहना ही क्या है ? इतनी सी बात ही क्या है ?

इस प्रकार संसारमें भटकानेवाले मिथ्यात्वको छोड़, अर्हत देव, निर्ग्रंथ गुरु और दयामयी धर्मको सेवन कर षट्द्रव्य, सप्त तत्त्व, नव पदार्थका स्वरूप जानो। आत्माके सचे धर्मका श्रद्धान कर सच्चा सुख पाओ। मनुष्य-जीवनका यही लाभ है।

समयकी आवश्यकताके अनुसार स्त्रियोको कुछ और भी शिक्षाएँ यहाँ लिखी जाती हैं। आशा है, स्त्रियां ध्यान देंगीं।

विद्याके अभाव और कुसंगतिके प्रभावसे जैन स्त्रियां भी व्याह और पुत्र-जन्मके समय ऐसे बुरे गीत–सीठने–निर्लज्जगालियां–गाती हैं, जो उच्च जैनकुलके सर्वथा विरुद्ध है। सोचो तो कि, जहां अपने माता पिता, सास श्वसुर आदि गुरुजन, वेटा वेटी और जातिके जेठे नरनारी आदि वैठे हों वहां गालिया गाकर, उन फूहड, कर्णकटु, सद्भाव-भंजक और क्षुद्रता-व्यजक शब्दोंकी धारा वरसा कर, स्त्रियां क्या लाभ सोचती हैं ? उन्हें कुछ लाज नहीं आती ? जिन शब्दोंके कहनेमें वेश्याएं भी शरमाती हैं, उनके कहनेमें भले घरकी वहू वेटियाँ, और तो और, भरे वाजारमें, सभी तरहके जेठे वडे स्त्री-पुरुषोंके साम्हने, कुछ भी संकोच न

करें, यह कितने गजबकी बात है। बड़ी प्रसन्न हो होकर सुआचरणी स्त्रियोंको गालियां देना--लांछन लगाना--व्यभिचारिणी कहना, कितने दुःखकी बात है। यह केवल उन स्त्रियों या उनके पतियोंकी अज्ञानता है। इन निर्लज्जता भरे फूहड गीतोंके गानेका यही कारण मालूम होता है कि, आंखोंकी लाज या शरमको दूर करना, और शीलवान होते हुए भी ऐसे गायन गाकर अपने व्यभिचारपनेकी डौंड़ी (ढिंढोरा) पीटना। जिस प्रकार कोई कुटनी (दूती) दो चार वेश्याओंको साथ बिठाकर, व्यभिचार-सेवनके भावसे, बुरे शब्दों द्वारा, आनेजानेवाले पुरुषोंको लुभाती है। उसी प्रकार एक बड़ी निर्लज्ज गानेवाली वृद्धाके निकट, बहुतसी युवा स्त्रिया बैठकर, बुरे बुरे गीतों द्वारा अपना व्यभिचारपन प्रकट करती हैं। और छोटी छोटी पुत्रियोंके कोमल हृदयों पर अपनी इन बातोंसे बहुत बुरा प्रभाव डालती है। विवाह सरीखे पवित्र कार्य्योंमें तो, इसका पूरा पूरा मौका मिलता है। फेरेके दिन पुरुष तो वरको साथ ले कन्या-पक्षके यहां फेरे फिराने चले जाते है, और यहां अवसर पाकर स्त्रियां, अपनी कौटुम्बिक सहेलियों और नीच जातिकी स्त्रियोंके साथ इकट्ठी हो, एक सुन्दर युवतीको पुरुषके वेषमें करके, उसका एक दूसरी स्त्रीसे काल्पनिक सम्बन्ध जोडतीं हैं। अथवा कभी कभी यह संबंध नहीं भी जोड़ती। केवल एक स्त्रीको बारा बना देती है, और उसके

साथ मनमानी कुचेष्टा करती हुई, अटूट और लबालब शृंगारके गीत गाती हुईं, तथा ढोल बजाती हुईं सारे बाजारमें फिरती हैं। इस कृत्यको देख और सुनकर लज्जाको भी लज्जा आती है। *

धिक्कार है ऐसे लोगोंको, जो इन कृत्योंसे—इन घृणास्पद कार्योंसे—अपनी स्त्रियोंको नहीं रोकते। क्या कोई कह सकता है कि, ऐसे जाति, धर्म और लोक विरुद्ध कार्य्य करनेवाली स्त्रियां शीलवती रह सकती हैं? कदापि नहीं। उनमें किसी न किसी व्यभिचारका अंश तो जरूर होगा। अथवा यों कहिए कि, उनकी मूर्खता ही उन पर ये दोष आरोपित करवाती है। गीत गाओ। उनकी मनाई नहीं है। पर ऐसे गीत गाओ जो देश जाति और धर्मके कल्याणका मार्ग बतावें, स्त्री-पुरुषोंको बुरे मार्गोंपरसे खींचकर अच्छे मार्गोंपर चलावें; और साथ ही उनके चित्तको भी प्रसन्न रखे।

ब्याहके समय बहुतेरी स्त्रियां अज्ञानता और अन्ध-परम्पराकी नीतिसे अथवा अन्य मतावलम्बियोंकी देखा देखी, देवी दिहाड़ी, चक्की, चूल्हा, देहली, गणेश, कुम्हारका चाक और गधे आदिको पूजतीं और साथ साथ निर्लज्ज गीत गाकर समझती हैं कि इन बातोंसे ब्याह निर्विघ्न समाप्त होता है। यह उनका बड़ा भ्रम है। भला मूर्खता पूर्ण और

* यह रीति सार्वदेशिक नहीं है। और तो और, लेखकके प्रदेशके पड़ोसी मध्यप्रदेशके जैनियोंमें यह बाबा बनानेकी प्रथा नहीं है। हां, फूहड़ गीत जरूर गाए जाते हैं। पर अब वे भी बहुत कम। —सशोधक

अकार्योंसे कोई कब सफलता पा सका है । जो धर्मात्मा और बुद्धिमान है, वे जन्मसे मरण तकके सम्पूर्ण संस्कार शास्त्रानुकूल करके पुण्य-बंध करते है । जिससे अपने आप विघ्न आते ही नहीं । वे विवाहादिक संस्कारोंको भी शास्त्रानुकूल ही करते है । वर्तमानमें विवाह सम्बन्धी जो नेंग या प्रथाएँ बुरी समझी जाती है उनकी वास्तविकताकी ओर दृष्टि देकर देखा जाय, तो जान पडता है कि सुरीतियां ही धीरे धीरे इस रूपमें आ गई है, जिन्हें अब हम बुरी और हानिकारक निगाहसे देखने लगे है । अगवानी (आतिश बाजी) शब्द हमें स्पष्ट बताता है कि, वर-पक्षकी बारातके आनेपर पेशवाई करना—स्वागत करना—ही अगवानी है । आश्चर्य नहीं कि, इस स्वागतकी प्रथामें कभी आतिशबाजी भी चलाई जाती रही हो। सो और आदर-सत्कार तो गया । रही ये मुंह झुलसा देनेवाली और रुपयोका धुआँ उडा देनेवाली आतिश बाजी । और क्या जाने किसी मन चले रईसजादेने ही, शायद इस हत्याकारिणी प्रथाको जन्म दिया हो । समयके फेरसे न जाने कितनी अच्छी प्रथाएं अतीतके गर्भमें समा गई; और उनके बदले कितनी ही नष्ट भ्रष्ट प्रथाए उन्हीं पूर्व प्रथाओंके बचे खुचे ईंटरोड़ेसे तैयार हो गई । अथवा अनेकों नई प्रथाए उत्पन्न हो गई । उन्हींमेंसे अनेकोंके नाम भी अपभ्रंश हो गए । किसी किसी देशमें विवाहके पूर्व कुम्हारके चकेकी पूजनकी जाती है; क्या जाने शायद इसका प्रयोजन सिद्ध-चक्र-

यंत्रकी स्थापना हो! इसी यंत्रको भाँवर-फेरा-के पूर्व विवाह मण्डपमें लानेका नाम गणावना–विनायकी–है । और भी कई क्रियाएँ ऐसी है जो (अर्थका अनर्थ) हो गई है। यदि उनके विषयमे छान वीनकी जावे तो वे कोई अच्छी प्रथाएँ (आरंभमें) निकलेंगीं । चतुर व्यक्तियोंको चाहिए कि वे प्रत्येक कार्य्यका यथार्थ-वास्तविक-स्वरूप ही जानकर ठीक रीतिसे व्यवहार करें । विवाह आदिमें भोजन वगैरह शुद्ध सामग्री तैयार कराने, और पानीके छाननेका पूरा यत्न रखना चाहिए जिससे उत्तम जातिका आचार विचार नष्ट न होने पावे । विवाहमें कभी भी कुप्रवृत्तियोंके वढाने-वाले, अनर्थ-दडरूप, लज्जा-जनक, लोक-निंद्य, भंड-गीत भूलकर भी न गाए जाएँ । ऐसे गीतोंसे शीलमे दूपण लगता है । लोग निन्दा करते है कि, ये उच्च जातिकी निर्लज्ज स्त्रियां गली गली कैसी निंद्य गालियाँ बक रही है और अपनी जाति तथा धर्मको लाञ्छन लगा रही हैं । जो बुद्धिमान स्त्रिया अपने लोक परलोक सुधारा चाहती है, वे ये भंडगीत गाना और अन्य मिथ्यात्त्व-सेवन कुछ भी निंद्य कार्य्य नहीं करतीं । शुभ क्रियाएँ करती हैं, और सुन्दर बोधमद और धार्मिक गीत गाकर पुण्य लाभ लेती हैं, जिससे उनका, उनके कुलका और उनके धर्मका यश, जगतमें फैलता है । *

---

* सब जगह एकसी मूर्खताए नहीं हैं । उनमें भेद है । परन्तु वे अब शीघ्रतासे उठती जाती हैं । —संशोधक ।

अष्टम प्रकरण।



विधवाओंका कर्तव्य-कर्म।



नरभव, यौवन, धान्य धन, अरु विवेक विज्ञान।
पाय धर्म सेवन करहु, काटहु कर्म सुजान॥
जो कदाच दुख आ परै, तो न करहु कछु सोग।
पूरव करनी जिमि करी, धरि धीरज फल भोग॥
धर्म-कर्ममे अटल रहु, कटें पूर्व कृत पाप।
पुण्यकर्म नूतन बँधैं, सुख पावें नित आप॥

इस पुस्तकमें स्त्रियोंके योग्य और तो प्रायः सब कुछ (शायद लेखककी धारणाके अनुसार) लिखा जा चुका है। केवल थोडासा यही उपदेश देना शेष रह गया है कि कदाचित पाप-कर्मके उदयसे कोई स्त्री विधवा हो गई हो, तो उसे अपना शेषजीवन किसप्रकार व्यतीत करना चाहिए।

प्रकट रहे कि विवाह होने पर पुत्रकी संज्ञा पति, और पुत्रीकी संज्ञा स्त्री हो जाती है वे दोनों नियमानुसार जीवन भरके लिए एक सूत्रमें बँध जाते है। वे दोनों यदि बुद्धिमान हैं, योग्य हैं, तो लौकिक और पारलौकिक दोनो प्रकारके सुखोंके पात्र होते हैं। इस जीवनमें ये केवल

अपने कुटुम्बका ही नहीं, वरन अपनी जाति और देश तकका हित साधन करते हैं। इसलिए दम्पतिको अपने और पराए हितके लिए विद्वानोंके सिखापनों पर चलना चाहिए, और उत्तम शिक्षाओंका प्रचार अपनी सन्तानमें करना चाहिए; ताकि वे धर्म और नीतिके मार्ग पर चलनेमे अग्रसर हो। प्रत्येक गृहस्थीमें उसकी आय (आदमनी) से थोडा खर्च होना आवश्यक है। अर्थात् जहातक हो सके आयका आधा भाग कुटुम्ब-निर्वाहमें और चौथाई भाग पुण्य-दान आदि परोपकारके कार्य्योंमें व्यय कर शेषकी बचत रक्खे। क्योंकि बचा हुआ द्रव्य अकस्मात् आए हुए मौकों पर व्याह शादी और रोग आदिके समय बडा काम देता है। कहां, कैसा, और कितना खर्च करना, और कहां न करना, यह बात प्रत्येक स्त्री पुरुपको सीखनी चाहिए। बचत करनेका प्रत्येक उपाय सीखना और उसका उपयोग करते रहना यह एक सुन्दर कला है।

इससे अच्छे प्रकार खर्च चलाते हुए भी बचतकी जा सकती है। यह सच है कि, घरकी पूंजीसे ही बरकत होनी और मौकेकी गरज सरती है। यदि बचत न रक्खी जाय तो वक्त वक्त पर दूसरेके द्वारपर जाकर रुपया मागना पडता है, जिससे प्रथम तो अपना अभर (भीतरी बात) खुलता और दूसरे आंखें कुछ नीची पडती है। औंधा-सीधा ब्याज देना

पड़ता है और रुपया कर्ज पर उठाना पड़ता है। जिसकी चिन्तामें रात दिन पड़े रहते और किसी भी तरह-पापकर्म द्वारा भी-रुपये कमानेकी फिकर पड़ती है। कर्जदार आदमीकी साख प्राय: बाजारसे उठ जाती है और उसे लोग उधार देनेमें संकोच करते हैं। बिरादरी, पुरा-पड़ोस, अथवा गांव-परगांवके जो लोग तुम्हारी फिजूल खर्चीके समय वाह वाह करते थे, वही फिर ऑख उठाकर नहीं देखते कि कहीं कर्ज न मॉगने लगे " देख लेते है तो कतराके निकल जाते हैं। बात जो आपड़ती है तो बातको बनाते हैं।" फिरतो यही हाल होता है। बाप दादोंतककी प्रतिष्ठा धूलमे मिल जाती है और कभी कभी तो यह कर्जकी पोटली नाती पोतों तक जाती है। इसीलिए नीतिमे कहा है कि "तेते पांव पसारिए जेती लाम्बी सौर" जो व्यक्ति इस नीति पर ध्यान देकर तदनुसार चलते हैं वे सुखी होते है। और जो नहीं चलते वे मौके पर कर्ज रूपी चक्करमें पड़ते है, और अपने जीवनको घोर दु:ख-मय बनाते हैं। व्याह शादीके समय, अथवा गमीके समय झूठी वाहवाही लूटनेके लिए हजारों रुपया बरबाद—व्यर्थ बरबाद—कर देते हैं; घरमें न होने पर क़र्ज लेकर खर्च करते हैं, और फिर जन्मभर शोक और नालिश कुरकीके दुःख उठाते हैं। इसी शोक तथा दुःखसे जर्जरित होकर अकालहीमें कालके गालमें समा जाते हैं। इसी फिजूल खर्चीके कारण जैन जाति

कँगाल हो रही है । कुछ उंगलियों पर गिनने योग्य खाते पीते व्यक्तियोंको छोड़कर अधिकांश जैन जाति रोटियोंको तरस रही है । उनके दु.ख मय जीवनकी कल्पना करते ही विचार होता है कि आज एक व्यापारी श्रीमान् जातिके अधिकाश पूत, पेटकी ज्वालामें किस तरह जल रहे है । अतएव प्रत्येक स्त्री पुरुषको इस शिक्षा पर ध्यान देकर प्रामाणिक खर्च करना चाहिए, और एक चौथाई आय प्रति मास बचाते रहना चाहिए । दम्पतिको धर्म और नीतिके अनुसार चलते हुए अपना ग्रहस्थाश्रम चलाना चाहिए ।

यदि कोई स्त्री विधवा हो जाय तो अपने वय-प्राप्त पुत्रोंके आधीन रहे, और उन्हींकी आज्ञानुसार चले । यदि कुटुम्बमें कोई पालन पोषण करनेवाला न हो तो उसे चाहिए कि अपने कुल और जातिके योग्य न्याय पूर्वक उद्योग करके अपना उदर निर्वाह करे और सतोष करके धर्ममे संलग्न रहे ।

देखा जाता है कि कोई कोई स्त्रियां विधवा हो जाने पर महीनों, रोया करती हैं । माथा पीटतीं और छाती कूटती है, पर यह सब व्यर्थ है । उनका चिल्लाना सुनता कौन है ? और फिर इस दुखको दूर कर ही कौन सकता है। रोना तो मानो केवल मूर्खता दर्शाना है । बहुत जगह पुरुष और स्त्रिया फेरेको आती हैं, और मृत-व्यक्तिका

गुणानुवाद करके उस वेचारीको और रुलाती हैं । जिससे उसे तीव्र आर्त परिणामों द्वारा नर्क-आयुका बन्ध होता है ।*

विधवा स्त्रीका बाहर न निकलना ही किसी तरह अच्छा है । परन्तु कारण-वश उसे निकलना ही पडता है । जैसे मन्दिर आदिको । उसे विचारना चाहिए कि पूजन, अर्चन, दर्शन और शास्त्र-पठन-मनन ही तो पाप और दुःखके दूर करनेवाले हैं । फिर मूर्खोंके कहनेमें लगकर दर्शन आदि करने को न जाना क्या सयानपन है ? खाने-पीने, लैन-दैन आदि सांसारिक काम तो छूट ही नहीं सकते--होते ही हैं । परन्तु धर्मके लिए कोई प्रेरणा करनेवाला नहीं है । यदि तुम उसे भुला दो तो भले भुलादो । पर धर्मको भुलाकर तुम अपना दुःख दूर नहीं कर सकतीं, प्रत्युत वढाती ही हो ।

राजा राणा क्षत्रपति हथियनके असवार,
मरना सवको एक दिन, अपनी अपनी वार, १
दल बल देवी देवता मात पिता परिवार,
मरती विरियाँ जीवको कोइ न राखन हार; २
आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय,
यों कवहीं इस जीवका, साथी सगा न कोय, ३
जगवासी घूमें सदा, मोहनींदके जोर,
सरवस लूटे सुधि नहीं, कर्म चोर चहु ओर; ४

* पंडित भूधर दासजीकी निम्नाङ्कित कविता पर विधवा स्त्रियोंको खूब विचार करना चाहिये--संशोधक ।

अनेकों विधवाएँ कुसंगतिमे पडकर अथवा अपना बुरा वातावरण देखकर, अपने धर्मको भूल जाती हैं—सत्य से डिग जाती हैं। जिससे वे अंपने दोनों कुलोका नाम डुबाती है। और पुनर्लग्न—विधवा-विवाह—करके जन्म जन्मको वैधव्यका बीज बोती है। अथवा गुप्त व्यभिचार करती हैं, भ्रूण हत्याएं करती हैं अथवा कभी कभी बाल-हत्यातक कर डालती हैं। तब लोग इनकी ओर अँगुली दिखा दिखाकर कहते हैं कि, यह अमुककी बहू बेटी है, इसने भ्रूण हत्या आदिकी है। ऐसी कुटिलाए अनेक सुन्दर भडकीले वस्त्राभूषण पहिनतीं और तरह तरहके तर पदार्थ और मिष्टान्न खाती हैं। जिससे कामेच्छा बढती है। नाना भांतिके शृगार-रससे चुहचुहाते गान गाती हैं और बडे मजे और शौकसे वह घृणित-कार्य्य करती हैं जो कलमसे नहीं लिखा जा सकता। नतीजा इसका यह होता है कि, अगले जन्ममें इस पापके दंड भोगनेके सिवाय यदि स्त्री देह मिली तो पुनः युवावस्थामें ही विधवा होना पड़ता है। जो अच्छे घरोंकी बहू बेटिया हैं वे ऐसे दुष्कर्म नहीं करतीं, और न ऐसी स्त्रियोंका साथ करती हैं। वे बडे ही धैर्यसे इस कर्म्म-फलको—इस पति वियोगके दुःखको—सहती हैं। और सहना ही चाहिए। कर्म फलका उदय अमिट है। प्राणी पंच पापोंमे लिप्त होते या लिप्त रहते हुए तो इसका कुछ खयाल नहीं करता

पर जिस समय उनका उदय आता है—इष्टका वियोग और अनिष्टका संयोग होता है—तो हाय हाय करता है।

परन्तु इस हाय हायसे दुःख घटनेका नहीं, उलटा बढ़ता है। उसे तो—कर्म फल को तो—संतोष और प्रसन्नताके साथ भोग लेनेमें ही सार है। उस समय सोचना चाहिए कि पाप कर्मका उदय मेटनेको कोई समर्थ नहीं है। अंजना जैसी सती पूर्व पापके उदयसे २२ वर्षतक पतिकी अवहेलना—तिरस्कार—सहती रही; कुटुम्बियोंने ही व्यर्थका कलंक लगायीं; गर्भावस्थामें ही पहाड और जंगल जंगल भटकना पड़ा। अनेक कष्ट सहे। सीता जैसी पतिव्रताको झूठा कलंक लगाया गया; उसे पतिकी ही आज्ञासे नगरसे निकल वनमें जाना पडा, और इस पर भी दुःखका अन्त न आया, अपने शीलकी परीक्षा देनेको अग्नि—कुंडमें प्रवेश करना पडा। अनेक महान व्यक्तियां पापके उदयसे राजासे रंक और शूरसे क्रूर होगईं; तो हम सरीखोंकी बात ही क्या है? विचारना चाहिए कि, कदाचित मैंने पूर्वभवमे जिनेन्द्रके प्रतिबिम्बका अनादर किया होगा, अविनय किया होगा; जिनमन्दिर या चैत्यालयके उपकरण चुराए होंगे; निर्माल्य भक्षण किया होगा; अशुद्धिकी अवस्थामें माननीय पूज्य-पुरुषों या ऋषियोंको भोजन कराया होगा; उसी अवस्थामें शास्त्र छुए होंगे व मन्दिर गई हूंगी, मन्दिरमें अशुद्ध द्रव्य चढ़ाया होगा; जिन-मन्दिरमें प्रमाद, मूर्खता

या कोई कुचेष्टाकी होगी, मुनिदानमें अन्तराय डाला होगा, सच्चे धर्मात्माओंकी झूठी निन्दाकी होगी, झूठी चुगली खाई होगी; किसीको झूठ कलंक लगाया होगा; मिथ्यात्व सेवन किया होगा; हिंसाके कार्य्य किए होंगे, जेठे पुरुषोंका–मान-नीय पुरुषोंका–अपमान किया होगा, अभक्ष्य भक्षण किया होगा; प्रतिज्ञा भंग की होगी, आशय यह कि, अनेक प्रकारसे पाप कमाया होगा, तभी तो यह पतिवियोगका दुःसह दुःख सहना पड रहा है । अब मेरा यही कर्तव्य है कि, धैर्य धारण करके इस विपत्तिको विना किसी संकल्प विकल्पके भोगू । और आगेके लिए सावधानीसे धर्ममें तत्पर होऊं । यदि धर्ममें तत्पर न होऊगी तो न जानें आगे मेरी क्या दुर्गति होगी–न जाने कैसे दुख भोगने होंगे । अब तो मैं धर्मकी शरण हूं, क्यों कि वही दुःखसे पार करनेवाला और भव भवमें सुख देनेवाला है ।

ऐसा ही विचारकरे । अशांतिकी ओर अपने विचा-रोंको न ढुलने देवे । दान, व्रत, तप, नियम, पूजन और वाध्याय पूर्वक अपनी आयु पूर्ण करे । सांसारिक विष-योंसे–पचेन्द्रियोंके विषयोंसे–दूर रहे । अपनी इन्द्रियों और नको वश करे । स्त्रीको शृंगार करना सधवा होने परही भा देता है । विधवाका शृंगार धर्म-विरुद्ध, लोक–निंद्य र शीलका घातक है । विधवा अयोग्य वस्त्राभूषण ण न करे । सधवाओं जैसे चटकदार कपड़े और गहने

न पहिने। अंजन आदि न लगावे। पान, इलायची और केसर आदि पुष्ट और कामोद्दीपक मसाले न खावे। माथे पर तिलक-विन्दी-रोरी-न लगावे। बालों या कपड़ोंमें तैल या इत्र न लगावे। दूध, दही, घृत, मोदक आदि गरिष्ट और पुष्टिकारक भोजन अधिक परिणाममें न खावे। क्योंकि इससे इन्द्रियां प्रबल होकर अपने अपने विषयोंकी ओर खींचती हैं। यदि ये अथवा ऐसेही और पदार्थ बिलकुल न खाए जावे तो अच्छा है। किसी स्त्री या पुरुषसे हँसी तमाशे और कौतूहल आदि क्रिया न करे। नाटक, सिनेमा, स्वांग, रहस, भांडोंके कौतुक और मेलों तमाशोंमें न जावे। बुरे गीत न गावे और बुरे वार्तालाप न सुने। सधवाओंके सधवापनके चिन्होंकी-अलंकार आदिकी-इच्छा न करे। नीचेकी कविताको सोचे समझे।

दुख औ सुखके बीचमें, पछतावे क्यों क्रूर।
माशा बढै न तिल घटै, जो कुछ लिखा अँकूर॥
पूरब भोग न चिन्तवै, आगम बांछा नाहिं।
वर्तमान वर्तै सदा, सो सुखिया जगमाँहि॥

एकासन, उपवास, नीरस भोजन, बेला, तेला (समयको टालकर खाना) आदि तपोंके द्वारा इन्द्रियोंके वेगको रोके-उन्हें कृश करे। पूजा, दान, स्वाध्याय, पठन पाठन और धर्म-ध्यान आदि शुभ कार्य्योंमें अपना समय लगावे। जिससे पुण्य-बंध हो और दुःखकी कुछ शान्ति हो। मतलब

जीवन
अनेकं
यदि

अज्ञान और कष्ट शीघ्र ही मिटा डाल सकती हैं। वे स्त्रियां धन्य हैं, जो विधवा होनेपर इस प्रकार अपने और पराए हितमें तत्पर हो जाती हैं। बहिनो, यह स्त्री-पर्य्याय और जैन कुल तुम्हें किसी भाग्यसे मिला है। इस समयका एक भी क्षण तुम्हें व्यर्थ न खोना चाहिए। यदि दुर्भाग्यसे विधवा हो गई हो, तो भी अपने परिणामोंको सम्हालके रक्खो। धर्म ध्यानमें अपना समय बिताओ। यह पर्य्याय, समुद्रके किनारे लगनेकी है। यदि इस समय तुम भूल गई-चूक गई-तो ठिकाने लगना मुश्किल है। उठते-बैठते, खाते-पीते, चलते-फिरते और प्रत्येक काम करते या न करते समय यह न भूलो कि हम मनुष्य हैं और हमारा काम धीरे धीरे कर्मोंके जंजालसे छूटना है।

मनुष्य पर्य्यायके विषयमें एक कविने कहा है—

जाकों इन्द्र चाहें अहमेन्द्रसे उमाहे जासों,
जीव मुक्ति जाय, भवमलको बहावे है।
ऐसो नर जन्म पाय खोयो विष विषै खाय,
जैसे काँच साँटे मूढ माणिक गमावे है।
माया नदी बूड भींजा, काय बलतेज छीजा,
आया पन तीजा अब कहा बन आवे है।
तातें निज शीश ढोलें, नीचे नैन किए डोले,
कहा बढ बोलें वृद्ध बदन दुरावै है॥ १॥
जोई क्षण कटै सो तो आयुमें अवश्य घटै,
बूंद बूंद बीतै जैसे अंजलिको जल है।

देह नित क्षीण होत नैन तेज हीन होत,
यौवन मलीन होत क्षीण होत वल है।
आवै जरा नेरी तकै अतक अहेरी आवे,
परभौ नजीक जात नरभौ निफल है।
मिलके मिलापी जन, पूछत कुशल मेरी,
ऐसी दुर्दशामे मित्र काहेकी कुशल है ॥ २ ॥
काहू घर पुत्र जायो काहूके वियोग आयो,
कहू राग रग कहू रोया रोय करी है।
जहा भानु ऊगत उछाह गीत गान देखे,
साझ समै ताही थान हाय हाय परी है।
ऐसी जग रीतिको न देख भयभीत होत,
हा हा नर मूढ तेरी मति कौन हरी है।
मानुष जनम पाय, सोवत विहाय जाय,
खोवत करोरनकी एक एक घरी है ॥ ३ ॥
देखो भर यौवनमें पुत्रको वियोग भयो,
तैसेही निहारी निज नारी कालमगमे।
जे जे पुण्यवान जीव दीसत है जग माहि,
रक भयें फिरें तिन्हें पनहीं न पगमें।
एते पै अभाग, धन जीतवसे धरै राग,
होय ना विराग जानै रहूगो अलगमे।
आखिन विलोके अध सुस्सेकी अंधेरी करै,
ऐसे राज-रोगको इलाज कहा जगमें ॥ ४ ॥

ऐसी हम संसारी जीवोंकी भ्रम-बुद्धि और अज्ञान-दशा देख श्रीगुरु करुणा करके इस प्रकार समझाते हैंः—

जौलो देह तेरी काहू रोगने न घेरी जौलों,
जरा नाहिं नेरी जासों पराधीन पर है ।
जौ लों जम नामा वैरी देय न दमामा तौ लो,
माने आन रामा बुधि जाय न विगर है ।
तौलो मित्र मेरे! निज कारज सभार टेरे,
पौरुष थकैगो फिर पीछे कहा कर है
अहो आग आये जब झोपडी जरन लागे,
कूपके खुदाए कहो कहा काज सर है ॥ ५ ॥

इसलिए हे जाति-सुधारक भाइयो और वहिनो, ऐसा यत्न करो जिससे समाजकी ये विधवाएं अपने निस्सार जीवनको उपयोगी जीवन बना डालें । मनुष्य या स्त्री जन्मका कर्तव्य समझे। मिथ्यात्व और प्रमाद छोड धर्ममें तत्पर होवें। और अपना अगला जन्म मंगल-मय बनावें । यदि वे अभी आत्म-कल्याण न करेंगी तो पीछे पछताना होगा और दुःखमे पडना होगा ।

मानुप तन श्रावक कुलहि, पावो दुर्लभ फेर ।
यह अवसर मत चूकियो सद्गुरु भाषें टेर ॥

सप्तम प्रकरण

सूतक निर्णय

सूतक वृद्धिहानिभ्या, दिनानि दश द्वादशे ।
प्रसूतिस्थान मासैक, दिनानि पञ्च गोत्रिणाम् ॥

अर्थ—जन्मका सूतक १० दिनका और मृत्युका १२ दिनका होता है । प्रसूति स्थानको १ माह और गोत्रके मनुष्यको ५ दिनका सूतक होता है ।

प्रव्रजिते मृतेकाले देशान्तरे मृतेरणे ।
सन्यासे मरणे चैव, दिनैक सूतक भवेत ॥

अर्थ—जो गृह त्यागी दीक्षित विदेशवासी, या संन्यासी मरे अथवा जिसने संग्राममें प्राण छोडा हो तो इनका १ दिनका सूतक मानना चाहिए (यदि अपने कुलका हो तो।) यदि अपने कुलका कोई विदेशमें मरा हो और १२ दिन पीछे खबर मिले तो १ दिनका सूतक मानना चाहिए। यदि १२ दिनके पहिले खबर मिले तो १२ दिन पूरे होनेमें जितने दिन बाकी रहे हों उतने ही दिनका सूतक माने ।

चतुर्थे दश रात्रि स्यात, षड्रात्रि पुसि पञ्चमे ।
षष्ठे चतुराशुद्धि, सप्तमे च दिन त्रयं ॥
अष्टमे पुस्यहोरात्रि, नवमे प्रहरद्वय ।
दशमे स्नानमात्र स्यात, एतङ्गोत्रस्य सूतकम् ॥

ऐसी हम संसारी जीवोंकी भ्रम-बुद्धि और अज्ञान-दशा देख श्रीगुरु करुणा करके इस प्रकार समझाते हैं:—

जौलो देह तेरी काहू रोगने न घेरी जौलों,
जरा नाहिं नेरी जासो पराधीन पर है।
जौ लो जम नामा वैरी देय न दमामा तौ लो,
माने आन रामा बुधि जाय न बिगर है।
तौलो मित्र मेरे! निज कारज सभार रे,
पौरुष थकैगो फिर पीछे कहा कर है
अहो आग आये जब झोपडी जरन लागे,
कूपके खुदाए कहो कहा काज सर है॥ ५॥

इसलिए हे जाति-सुधारक भाइयो और बहिनो, ऐसा यत्न करो जिससे समाजकी ये विधवाएं अपने निस्सार जीवनको उपयोगी जीवन बना डाले। मनुष्य या स्त्री जन्मका कर्तव्य समझें। मिथ्यात्व और प्रमाद छोड धर्ममें तत्पर होवें। और अपना अगला जन्म मंगल-मय बनावें। यदि वे अभी आत्म-कल्याण न करेंगी तो पीछे पछताना होगा और दुःखमें पडना होगा।

मानुष तन श्रावक कुलहि, पावो दुर्लभ फेर।
यह अवसर मत चूकियो सद्गुरु भाषें टेर॥

सप्तम प्रकरण

सूतक निर्णय

सूतक वृद्धिहानिभ्या, दिनानि दश द्वादशे।
प्रसूतिस्थान मासैक, दिनानि पच गोत्रिणाम्॥

अर्थ—जन्मका सूतक १० दिनका और मृत्युका १२ दिनका होता है। प्रसूति स्थानको १ माह और गोत्रके मनुष्यको ५ दिनका सूतक होता है।

प्रवजिते मृतेकाले देशान्तरे मृतेरणे।
सन्यासे मरणे चैव, दिनैक सूतक भवेत॥

अर्थ—जो गृह त्यागी दीक्षित विदेशवासी, या संन्यासी मरे अथवा जिसने संग्राममें प्राण छोडा हो तो इनका १ दिनका सूतक मानना चाहिए (यदि अपने कुलका हो तो।) यदि अपने कुलका कोई विदेशमें मरा हो और १२ दिन पीछे खबर मिले तो १ दिनका सूतक मानना चाहिए। यदि १२ दिनके पहिले खबर मिले तो १२ दिन पूरे होनेमें जितने दिन बाकी रहे हों उतने ही दिनका सूतक माने।

चतुर्थे दश रात्रिं स्यात्, षड्रात्रिं पुसि पचमे।
षष्ठे चतुराशुद्धिं, सप्तमे च दिन त्रय॥
अष्टमे पुस्यहोरात्रि, नवमे प्रहरद्वय।
दशमे स्नानमात्र स्यात्, एतद्गोत्रस्य सूतकम्॥

अर्थ—तीन पीढ़ी तक १२ दिन, चौथी पीढ़ीमें १० दिन, पाँचवीं पीढ़ीमें ६ दिन, छठवीं पीढ़ीमें ४ दिन, सातवीं पीढ़ीमें ३ दिन, आठवीं पीढ़ीमें १ दिन-रात्रि, नवमी पीढ़ीमें २ महर और दशवीं पीढ़ीमें केवल स्नान न करने तक सूतक जानना चाहिए ।

यदि गर्भे विपत्तिः स्यात् श्रवणां चापि योपिता ।
यावन्मासस्थितो गर्भ, स्तावद्दिनानि सूतकम् ॥

अर्थ—स्त्रीका गर्भ पतन हो तो जितने मासका गर्भ हो उतने दिनका सूतक मानना चाहिए ।

पुत्रादि सूतक जाते, गते द्वादशके दिने ।
जिनाभिषेकपूज्याभ्यां पात्र दानेन शुद्ध्यति ॥

अर्थ—पुत्रोत्पत्ति आदिके सूतकसे १२ दिन उपरान्त भगवानका अभिषेक, पूजन तथा पात्र-दान करनेके पीछे शुद्धि होती है । (यहां सूतक शब्दसे जन्म, मरण दोनोंके सूतक समझना चाहिए ।) कभी कभी जन्मका १० दिनका और मरणका १२ दिनका सूतक माना जाता है ।

अश्वाच, महिषी, बेटी, गौ प्रसूता गृहागणे ।
सूतकं दिनमेक स्यात, गृह बाह्ये न सूतकं ॥

अर्थ—घोड़ी, भैंस, दासी, गौ आदि जो अपने घरके आंगनमें (घरके भीतर) जनें, तो १ दिनका सूतक होता है, जो गृह बाहिर जनें तो सूतक नहीं ।

सतीना सूतक हत्या पाप षण्मासकं भवेत् ।
अन्या सामान्य हत्याना, यथा-पाप् प्रकाशयेत् ॥

अर्थ—अपनेको अग्निमें जला लेवे, ऐसी सती होनेका पाप (सूतक ?) ६ मासका होता है । और हत्याओंका पाप (सूतक ?) भी यथा योग्य जानना चाहिए।

दासी दासस्तथा कन्या, जायते म्रियते यदि ।
त्रिरात्रि सूतक ज्ञेय, गृहमध्ये तु दूषणम् ॥

अर्थ—जो दासी, दास तथा कन्या जन्मे या मरे, तो ३ रात्रिका सूतक है। यदि गृहके बाहिर हो तो सूतक नहीं होता है। (यहा मृत्युकी मुख्यता वश ३ दिनका सूतक कहा है।)

महिष्या पक्षक क्षीर, गोक्षीर च दशो दिन ।
अष्टमे दिवसे जाया, क्षीर, शुद्ध न चान्यथा ॥

अर्थ—जननेके बाद भैंसका दूध १५ दिनमें, गायका दूध १० दिनमें और बकरीका दूध ८ दिनमे खाने योग्य शुद्ध होता है।

श्लोक–जात दन्त शिशोर्नाशे, पित्रोर्दशाह सूतक ।
गर्भस्रावे तथा पाते, विनष्टे तु दिनत्रय ॥

अर्थ—जिस पुत्रके दाँत आगये हों उसके मरणका सूतक १० दिनका, और गर्भस्राव तथा गर्भपात और विनाशका सूतक ३ दिनका है।

त्रिपक्षे शुद्ध्यते सूती, दिने पच रजस्वला ।
परपुरुष रता नारी, यावज्जीवे न शुद्धति ॥

अर्थ—जिस स्त्रीके बाल बच्चा हुआ हो वह डेढ महीनेमें, और रजस्वला ५ दिनमें शुद्ध होती है। परन्तु व्यभिचारिणी स्त्री कभी शुद्ध नहीं होती। सदा अशुद्ध—अस्पर्श्य रहती है।

करि सन्यास मरे जो कोय। अथवा रणमे जूझो होय।
देशान्तरमे छोडे प्राण। बालक तीन दिवस लौ जान॥
एक दिवस हो इनको सोग। आगे और सुनो भविलोग॥
प्रौढा बालक दासी दास। अरु पुत्री सूतक इमि भास॥
दिवस तीन लौ कह्यो वखान। इनकी मर्य्यादा इमि जान॥

भावार्थ—८ वर्ष तकके बालकका ३ दिनका सूतक जानो। देशपद्धति–रूढि–से इसमें कितने ही मतभेद है। इसलिए देश–पद्धति–रूढिसे इसका पालन करना चाहिए।

ग्रन्थकर्त्ताका परिचय

कबित्त–दिल्ली सेती पश्चिम ठाम, बसे है गन्नौर गाम,
ताको वासी जयदयाल जैनी इक जानिये।
धर्महीसे राखे प्रीति, गहै नहीं दूजी रीति,
अग्रवाल गोयलगोत्र, मंद बुद्धि मानिए।
श्रावक धरमसार तामें लख हीना चार,
कीन्हो यो विचार नारी धर्मजु वखानिये।
लखि मोहि ज्ञानहीन, क्षमो गुणीजन प्रवीण,
कीजिए सुधार अरु भूल चूक छानिए॥ १॥

दोहा–लाला गंगा विष्णुसुत, राम नाथ वर भाल।
तसु सुत हर परसादमल, ता सुत यह जय दयाल॥ २॥
विक्रमाब्द उन्नीश शत, ठावन ऊपर जान।
पौष शुक्ल दोयज तिथी, धनराशी परमान॥ ३॥
पुस्तक पूरण है करी, क्षमियो चूक सुजान।
पढो सुनो औ आचरो, तो पाओ सुरथान॥ ४॥

इति।

शान्ति शान्ति शान्ति

शुद्धिपत्र.



पृ	प	अशुद्ध	शुद्ध
८	१७	चोके	चौके
२४	२	सहायता-पुर्ण	सहृदयता-पूर्ण
२९	६	पालश	पालतू
३१	१७	पढा	लिखा
५६	११	है	हैं
५७	५	द्रू	दू
५८	१६	करना कराना	करनी करानी
६२	३	आचार	अचार
६३	३	घड़े में	घड़े
६३	६	देना	देनी
७७	२	भूषित	दूषित
८१	६	सो वे	सोवे
८९	१८	वित	नित
९६	२१	जाएँ	जाए
१०३	२०	ऑर	और
१०४	१	अष्टम	षष्ठ
१०७	२०	दशाना	दरशाना
१११	३	पुठ	छठा